Fortnightly per copy Rs. 12/-

18th April 2025

ओ३म्

आर्य जीवन

ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Website : http://www.aryasabhaapts.org

Narendra Bhavan Phone No. : 040 24760030

Date of Publication 2nd and 17th of every Month, Date of Posting 3rd and 18th of every Month

महर्षि दयानन्द और सर्व-धर्म सद्भाव

(यहाँ पर प्रचलित अर्थों में पन्थ की जगह में धर्म शब्द का प्रयोग किया गया है।)

भारतीय इतिहास में यह पहला अवसर था जब महर्षि दयानन्द ने अपने व्याख्यानों, शास्त्रार्थों और ग्रन्थों के द्वारा विदेशी धर्मों का खण्डन किया। भारतीय सम्प्रदाय और धर्म तो एक दूसरे का खण्डन करते ही रहते थे। 'शाक्त, 'शैव, वैष्णव सम्प्रदाय परस्पर एक दूसरे का खण्डन करते रहे हैं। आद्य शंकराचार्य ने जैनों और बौद्धों के साथ शास्त्रार्थ किया और उनके धर्मों का खण्डन करके उनको परास्त कर वैदिक धर्म की स्थापना की। उनके प्रचार और शास्त्रार्थों से बौद्ध धर्म तो भारत में समाप्तप्राय हो गया। किन्तु मतखण्डन पूर्वक स्वमत स्थापना की परम्परा तो भारत में आदि काल से चली आ रही है।

महर्षि दयानन्द ने अपने प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में भारतीय धर्मों और विदेशी धर्मों का एक समान विधिवत् खण्डन किया है। इससे भारतीय धर्मों और विदेशी धर्मों के दुराग्रही अन्धविश्वासी लोगों में कुछ तनाव की भावना आई। इससे कुछ लोगों में यह धारणा बन गई कि महर्षि दयानन्द ने खण्डन के मार्ग पर चलकर दूसरे धर्मावलम्बियों के प्रति सद्भाव को छोड़ वैमनस्य का मार्ग अपनाया है। इससे भारत के विविध धर्मों के अनुयायियों के बीच तनाव बढ़ा है। अब हम कुछेक पंक्तियों में इस बात को स्पष्ट करने का प्रयत्न करेंगे कि क्या महर्षि दयानन्द ने खण्डन का मार्ग अपना कर तनाव उत्पन्न किया है अथवा धर्म के इतिहास में एक नई जागृति उत्पन्न की है और प्रत्येक धर्म को वैज्ञानिक आधार पर खड़ा करने का यत्न किया है, सभी धर्मों को एक मंच पर लाने का प्रयास किया है?

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश की रचना बड़े शुद्ध भाव और सत्यान्वेषण की दृष्टि से की है। वे सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में लिखते हैं– "यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मत में हैं वे पक्षपात छोड़कर सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो–जो बातें सबके अनुकूल सबके मत में है उनका ग्रहण और जो एक दूसरे से विरूद्ध बातें हैं उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्तें वर्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे क्योंकि विद्वानों के विरोध से अविद्वानों में विरोध बढ़ कर अनेकविध दुःख की वृद्धि और सुख की हानि होती है। इन हानि ने जो कि स्वार्थी मनुष्यों को प्रिय है– सब मनुष्यों को दुख सागर में डुबा दिया है।" महर्षि पुनः लिखते हैं– 'यद्यपि मैं आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुआ और बसता हूँ तथापि जैसे इस देश के मतमतान्तारों की झूठी बातों का पक्षपात न कर यथातथ्य प्रकाश करता हूँ वैसे ही दूसरे देशस्थ या मतोन्नति वालों के साथ भी बर्तता हूँ। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में बर्तता हूँ वैसा विदेशियों के साथ भी तथा सब सज्जनों को बर्तना योग्य है।

महर्षि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश की उत्तरार्द्ध अनुभूमिका में एक सार्वभौम मत को प्रवर्तन करने के लिए लिखते हैं– जब तक इस मनुष्य जाति में मिथ्या मतमतान्तर का विरूद्ध वाद न छूटेगा तब तक अन्योऽन्य को आनन्द न होगा। यदि हम सब मनुष्य और विद्वज्जन ईर्ष्या–द्वेष छोड़ सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना चाहें तो हमारे लिए यह बात असाध्य नहीं है। यह निश्चय है कि इन विद्वानों के विरोध ने ही सबको विरोध जाल में फंसा रखा है। यदि ये लोग अपने प्रयोजन में न फंसकर सबके प्रयोजन को सिद्ध करना चाहें तो अभी ऐक्य मत हो जाय।

शास्त्रार्थ परम्परा और सत्यान्वेषण का समर्थन करते हुए महर्षि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश की अनुभूमिका–२ में बारहवाँ समुल्लास आरम्भ करने से पहले लिखते हैं जब तक वादी–प्रतिवादी होकर प्रीति से वाद या लेख न किया जाय तब तक सत्यासत्य का निर्णय नहीं हो सकता। जब विद्वान् लोगों में सत्यासत्य का निश्चय नहीं होता तभी विद्वानों को महा अन्धकार में पड़कर बहुत दुख उठाना पड़ता है। इसलिए सत्य के जय और असत्य के क्षय के अर्थ मित्रता से वाद वा लेख करना हमारी मनुष्य जाति का मुख्य काम है।

सत्यार्थप्रकाश के उद्धरणों से हमने यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि सत्यासत्य के निर्णय के लिए प्रीति से

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

शास्त्रार्थ परम्परा को चलाना परम आवश्यक है और इसी दृष्टि से महर्षि ने अपने समय में प्रचलित सभी मतमतान्तरों की समीक्षा की है। अब हम महर्षि की जीवनी की ओर आते हैं और यह देखने का यत्न करते हैं कि उनका विविध धर्मों के अनुयायिओं के प्रति कैसा व्यवहार था। महर्षि संन्यासी होने के नाते **'सर्वभूतहिते रतः'** (सब प्राणियों का कल्याण करने वाले थे) वे 'शठे शाठ्यं समाचरेत्' –दुष्ट के प्रति दुष्टता का व्यवहार–सिद्धान्त को मानने वाले नहीं थे। वे तो दुष्टों के प्रति भी सज्जनता का व्यवहार करते थे। वे कहा करते थे– यदि दुष्ट अपनी दुष्टता को नहीं छोड़ते तो सज्जन अपनी सज्जनता को क्यों छोड़े? किसी कवि ने सज्जन का बड़ा सुन्दर लक्षण किया हैः–

ते साधवः सुजन्मानस्तैरियं भूषिता धरा।
अपकारिषु भूतेषु ये भवन्त्युपकारिणः।।

उन सज्जनों का जन्म लेना सार्थक है और ऐसे सज्जनों से धरती शोभायमान होती है– जो दुष्टों का भी उपकार करते हैं।

सच पूछिए तो महर्षि ऐसे ही सज्जन थे।

महर्षि दयानन्द "वसुधैव कुटुम्बकम्" के सिद्धान्त को मानने वाले थे। वे समस्त संसार को अपना परिवार समझते थे। उनके लिए अपने–पराये नाम की कोई बात नहीं थी। वे सब धर्मों में एकता लाना चाहते थे। उन्होंने सभी धर्मों के आचार्यों को एक मंच पर लाने का यत्न किया। उनकी जीवनी का एक प्रसंग यह हैः– दिसम्बर १८७६ में दिल्ली में राजदरबार हो रहा था। वहां महारानी विक्टोरिया के महोत्सव के उपलक्ष में एक बड़ी राजसभा होने वाली थी। उसके लिए सभी राजे–महाराजे और प्रतिष्ठित नागरिक राज–निमंत्रण से वहाँ एकत्र हो रहे थे। कहा जाता है कि महाराजा इन्दौर ने ऐसे अवसर पर धर्म–प्रचार करने के लिए महर्षि को निमन्त्रित किया था। वे राजमण्डल में भी उनका भाषण कराना चाहते थे। राजदरबार के अवसर पर महर्षि के सत्संग का लाभ उच्चकोटि के लोगों ने उठाया। महर्षि तो चाहते थे कि राजाओं, महाराजाओं की सभा करके सब आर्यों में एक धर्म और एकता का तागा पिरो दिया जाय परन्तु अनेक कारणों से इसमें सफलता नहीं मिली। भारतीय राजाओं से आशा को सफल न होते देख एक दिन महर्षि ने अपने स्थान पर भारत के भिन्न–भिन्न मतों और जातीय नेताओं की एक सभा बुलाई। उनके निमंत्रण पर पंजाब के प्रसिद्ध सुधारक कन्हैयालाल जी अलखधारी, श्रीयुत् नवीनचन्द्रराय, श्री हरिशचन्द्र चिन्तामणि, सर सैय्यद अहमद खां, श्री केशवचन्द्र सेन और श्री इन्द्रमन जी– ये छह सज्जन वहाँ पधारे। वहाँ महर्षि ने यह प्रस्ताव प्रस्तुत किया कि हम भारतवासी सब परस्पर एक मत होकर एक ही रीति से देश का सुधार करें तो आशा है भारत देश सुधर जावेगा, किन्तु कई मौलिक मतभेद होने के कारण वे सब एकता के सूत्र में सम्बद्ध न हो सके।

महर्षि दयानन्द को अपने सिद्धान्त प्यारे थे परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि वे अन्यों के सिद्धान्त की अवहेलना करते थे। वे बड़े सहनशील थे। वे पौराणिक या हिन्दू धर्म के मूर्ति–पूजा आदि सिद्धान्तों की शास्त्रीय दृष्टि से समीक्षा करते हुए भी हृदय को विशालता के कारण हिन्दू धर्म को उदार ही मानते थे। अपने जीवन के एक प्रसंग में वे १८७७ के लगभग अमृतसर पहुंचे। वहां के कमिश्नर की प्रार्थना पर महर्षि उनके बंगले पर पधारे। वार्तालाप करते हुए कमिश्नर ने कहा कि– "हिन्दू धर्म को" 'सूत के समान कच्चा' क्यों कहते हैं?" महर्षि ने उत्तर दिया– "यह कच्चा नहीं किन्तु लोहे से भी कड़ा है। हिन्दू धर्म समुद्र के समान है। इसमें अनेक अच्छे और बुरे मतों के तरंग विद्यमान हैं। इस धर्म में ऐसे भी लोग हैं जो अत्यन्त दयावान् हैं, सदाचारी हैं, परोपकार परायण रहते हैं और एक निराकार परमेश्वर को अपने मनो मन्दिर में पूजते हैं। इनके विपरीत वे लोग भी हिन्दू धर्म में पाए जाते हैं जो महाक्रूर, अनाचारी, वामी हैं; कोरे नास्तिक, अवतारों को मानने वाले हैं। यहाँ योगी, ध्यानी, तपस्वी और आजीवन ब्रह्मचारी रहने वाले भी विद्यमान हैं और ऐसे भी अनेक हैं– जिनका उद्देश्य आमोद–प्रमोद और संसार का सुख है। हिन्दू धर्म में जहाँ छूआ–छूत मानने वाले सैकड़ों हैं वहाँ सबके साथ भोजन करने वाले हजारों हैं। परमार्थ–दर्शी और तत्वज्ञानी लोग इस धर्म में उच्च पद के पाए जाते हैं और ऐसे भी मिल जाते हैं जो ज्ञान के पीछे डण्डा लिए डोलते हैं। उत्तम मध्यम और निकृष्ट विचारों–आचारों के सभी मत और उनके मानने वाले मनुष्य इस मार्ग में मिलते हैं। वे सभी हिन्दू हैं और उन्हें कोई हिन्दूपन से निकाल नहीं सकता इसीलिए हिन्दू धर्म निर्बल नहीं किन्तु परम सबल है।"

प्रायः सभी धर्म अपने मत को सर्वश्रेष्ठ और अन्यों को दीन समझते हैं। इस प्रवृत्ति के कारण वे अपने धर्म के विरुद्ध किसी बात को सुनना नहीं चाहते। इसी प्रवृत्ति के कारण भारत में प्रचलित सभी धर्म महर्षि के खण्डन से उनके विरोधी बन गए परन्तु महर्षि ने तो खण्डन का मार्ग सत्यासत्य के निर्णय के लिए अपनाया था। वे किसी के दिल को दुखाना नहीं चाहते थे। वे सैद्धान्तिक दृष्टि से सभी धर्मों का खण्डन करते थे, किन्तु सभी धर्मों के

हूँ। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में बर्तता हूँ वैसा विदेशियों के साथ भी तथा सब सज्जनों को बर्तना योग्य है।

महर्षि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश की उत्तरार्द्ध अनुभूमिका में एक सार्वभौम मत को प्रवर्तन करने के लिए लिखते हैं– जब तक इस मनुष्य जाति में मिथ्या मतमतान्तर का विरूद्ध वाद न छूटेगा तब तक अन्योऽन्य को आनन्द न होगा। यदि हम सब मनुष्य और विद्वज्जन ईर्ष्या–द्वेष छोड़ सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना चाहें तो हमारे लिए यह बात असाध्य नहीं है। यह निश्चय है कि इन विद्वानों के विरोध ने ही सबको विरोध जाल में फंसा रखा है। यदि ये लोग अपने प्रयोजन में न फंसकर सबके प्रयोजन को सिद्ध करना चाहें तो अभी ऐक्य मत हो जाय।

शास्त्रार्थ परम्परा और सत्यान्वेषण का समर्थन करते हुए महर्षि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश की अनुभूमिका–२ में

ते साधवः सुजन्मानस्तैरियं भूषिता धरा।
अपकारिषु भूतेषु ये भवन्त्युपकारिणः।।

उन सज्जनों का जन्म लेना सार्थक है और ऐसे सज्जनों से धरती शोभायमान होती है– जो दुष्टों का भी उपकार करते हैं।

सच पूछिए तो महर्षि ऐसे ही सज्जन थे।

महर्षि दयानन्द "वसुधैव कुटुम्बकम्" के सिद्धान्त को मानने वाले थे। वे समस्त संसार को अपना परिवार समझते थे। उनके लिए अपने–पराये नाम की कोई बात नहीं थी। वे सब धर्मों में एकता लाना चाहते थे। उन्होंने सभी धर्मों के आचार्यों को एक मंच पर लाने का यत्न किया। उनकी जीवनी का एक प्रसंग यह है:– दिसम्बर १८७६ में दिल्ली में राजदरबार हो रहा था। वहां महारानी विक्टोरिया के महोत्सव के उपलक्ष में एक बड़ी राजसभा होने वाली थी। उसके लिए सभी राजे–महाराजे और

हैं वहाँ सबके साथ भोजन करने वाले हजारों हैं। परमार्थ–दर्शी और तत्वज्ञानी लोग इस धर्म में उच्च पद के पाए जाते हैं और ऐसे भी मिल जाते हैं जो ज्ञान के पीछे डण्डा लिए डोलते हैं। उत्तम मध्यम और निकृष्ट विचारों–आचारों के सभी मत और उनके मानने वाले मनुष्य इस मार्ग में मिलते हैं। वे सभी हिन्दू हैं और उन्हें कोई हिन्दूपन से निकाल नहीं सकता इसीलिए हिन्दू धर्म निर्बल नहीं किन्तु परम सबल है।"

प्रायः सभी धर्म अपने मत को सर्वश्रेष्ठ और अन्यों को दीन समझते हैं। इस प्रवृत्ति के कारण वे अपने धर्म के विरुद्ध किसी बात को सुनना नहीं चाहते। इसी प्रवृत्ति के कारण भारत में प्रचलित सभी धर्म महर्षि के खण्डन से उनके विरोधी बन गए परन्तु महर्षि ने तो खण्डन का मार्ग सत्यासत्य के निर्णय के लिए अपनाया था। वे किसी के दिल को दुखाना नहीं चाहते थे। वे सैद्धान्तिक दृष्टि से सभी धर्मों का खण्डन करते थे, किन्तु सभी धर्मों के

महर्षि दयानन्द और सर्व-धर्म सद्भाव

अनुयायियों से प्रेम करते थे, विरोधियों का भी हित किया करते थे। अपने हत्यारों को भी क्षमा कर देते थे और उनके कल्याण के लिए यत्नशील रहते थे। महर्षि के जीवन से संबन्धित एक और घटना –लगभग १८६७ में वे अनूपशहर में प्रचारार्थ पहुंचे। वहां एक ब्राह्मण ने रुष्ट होकर उन्हें पान में विष दे दिया। महर्षि ने न्यौली कर्म करके विष को अपने शरीर से निकाल दिया। सैय्यद मुहम्मद तहसीलदार, जो महर्षि के भक्त थे, ने जब यह समाचार सुना तो ब्राह्मण को कैद कर लिया। तहसीलदार का विचार था कि मेरे इस कर्म से महर्षि प्रसन्न होंगे, किन्तु जब उसने महर्षि से यह बात बताई तो महर्षि अप्रसन्न हो गये और उन्होंने कहा कि– "मैं दुनिया को कैद कराने नहीं बल्कि उसे कैद से छुड़ाने आया हूँ। वह यदि अपनी दुष्टता को नहीं छोड़ता तो हम अपनी श्रेष्ठता क्यों छोड़ें?

महर्षि का ईसाइयों के प्रति कैसा सद्भाव था? ईसाइयों के गिरजाघरों के प्रति उनकी कैसी भावना थी? यह जानने के लिए एक घटना का उल्लेख करते हैं जो महर्षि के जीवन से संबन्धित हैं–१८७९ के लगभग महर्षि बरेली पहुंचे। वहां उनके व्याख्यान होते थे। महर्षि का पादरी स्कॉट के साथ स्नेह सम्बन्ध था। वे नहीं आये तो महर्षि ने व्याख्यान के बाद पूछा कि भक्त स्कॉट क्यों नहीं आयें? पता चला कि वे रविवार को गिरजाघर जाते हैं। महर्षि ने कहा कि चलो आज भक्त स्कॉट का गिरजाघर देख आएँ। महर्षि तीन चार सौ मनुष्यों के साथ गिरिजा में पहुंचे। महर्षि को आते देख पादरी स्कॉट वेदी पर से नीचे उतरकर आए और महर्षि को उपदेश देने के लिए प्रार्थना की। महर्षि ने उनके आग्रह पर वहाँ उपदेश दिया।

महर्षि का मुसलमानों के प्रति भी बड़ा स्नेहपूर्ण व्यवहार था और अभिजात वर्ग के मुसलमान भी उनका आदर करते थे। १८७३ के आसपास की बात है– महर्षि अलीगढ़ पहुंचे। वहां मुस्लिम युनिवर्सिटी अलीगढ़ के संस्थापक और प्रसिद्ध मुस्लिम नेता सर सैय्यद अहमद खां महर्षि की सेवा में प्रायः नित्य आया करते थे। एक दिन सैय्यद साहिब कई प्रतिष्ठित मुसलमानों और अंग्रेजों सहित महर्षि की सेवा में उपस्थित हुए और अग्निहोत्र की उपयोगिता पर वार्तालाप होता रहा। १८७६ में दिल्ली में राजदरबार के अवसर पर महर्षि ने सर्वधर्म एकता का आयोजन किया। इस गोष्ठी में परस्पर सौहार्दपूर्ण वार्तालाप हुआ।

लगभग १८७७ में महर्षि लाहौर पधारे। उनको लाहौर बुलाने में अधिक हाथ ब्रह्म समाजियों का था। उन्होंने महर्षि के दो व्याख्यान अपने मन्दिर में कराए। प्रथम व्याख्यान 'वेद ईश्वरीय ज्ञान' विषय पर था और दूसरा 'पुनर्जन्म' पर। ये दोनों व्याख्यान ब्रह्म समाज के मन्तव्यों के विरुद्ध थे। इसलिए ब्रह्म समाजी उनका विरोध करने लगे। महर्षि पुराणों का भी खण्डन करते थे, इसलिए जिस उद्यान में महर्षि निवास करते थे उसके मालिक ने भी उनका विरोध किया। फलतः महर्षि के भक्त जन उन्हें डॉक्टर रहीम खां की कोठी में ले आए। यह कोठी भक्त छज्जू के चौबारे के पास थी। इस कोठी में महर्षि व्याख्यान देते और दूसरे दिन शंका समाधान करते थे। इसी कोठी में निवास करते हुए महर्षि ने आर्य समाज के संशोधित दस नियम बनाये तथा आर्य समाज लाहौर की स्थापना हुई जिसका पहला सत्संग भी यहीं हुआ। धन्य हैं महर्षि! और धन्य हैं डॉ० रहीम खां जिन्होंने सर्वधर्म सद्भाव का एक अनूठा उदाहरण हमारे सामने रखा।

महर्षि जब जोधपुर में प्रचारार्थ पधारे थे तो वे राजस्थान के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री बरकत उल्ला खां के दादा की कोठी में निवास करते थे। श्री बरकत उल्ला खां ने सर्वधर्म सद्भाव के नाते उस कोठी को राष्ट्रीय स्मारक के रूप में दान कर दिया। ऐसे ही विरले अभिजात्य सज्जनों के सौजन्य से सर्वधर्म एकता की आदर्श भावना परम्परा से चली आ रही है।

महर्षि ने सर्वधर्म सद्भाव का अभियान चलाया था और आर्य समाज इस अभियान को अब तक चलाता आ रहा है। इतना ही नहीं मुस्लिम वर्ग भी आर्य समाज के इस सौहार्दपूर्ण अभियान का आदर करते हैं। आर्य समाज स्थापना शताब्दी दिल्ली १६७५ तथा महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी अजमेर १६८३ के अवसर पर मुसलमानों ने शोभा यात्राओं के समय अपनी भावमीनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की थी। प्रभु इस परम्परा को दोनों ओर से बनाए रखे।

व्यक्ति, संदेश और मिशन

डा. कपिला वात्स्यायन

स्वामी दयानंद सरस्वती के जीवन, कार्य और योगदान पर इस महत्वपूर्ण संगोष्ठी में भाग लेने के लिए मुझे आमंत्रित करना आदरणीय स्वामी अग्निवेश की दयालुता और उदारता है।

इस मंच पर प्रतिष्ठित वक्ताओं ने स्वामी दयानंद के अन्य धर्मों और आस्थाओं, विशेष रूप से इस्लाम, ईसाई धर्म और सिख धर्म के साथ बौद्धिक और सामाजिक मुठभेड़ों पर अमूल्य प्रकाश डाला है। मैं उनके प्रस्तुतीकरण में बहुत कम जोड़ सकता हूं, सिवाय इस तथ्य को रेखांकित करने के कि यहां सत्य का एक साधक था जिसने जांच की, पूछताछ की और इस प्रकार, विभिन्न विचारधाराओं के धार्मिक उपदेशों और नैतिक प्रथाओं के बीच एक स्पष्ट संवाद स्थापित करने का भी प्रयास किया। उन्होंने बौद्ध धर्म और जैन ध र्म सहित सभी धर्मों के सिद्धांतों की जांच की। इन तुलनाओं का आधार अपने आप में एक विशाल विषय है।

इसके बजाय, मैं स्वामी दयानंद सरस्वती के उस अथक और निरंतर जोर के बारे में कुछ और व्यक्तिगत स्तर पर कहना चाहता हूँ, जो उन सभी चीजों के मूल तत्व की ओर लौटने पर जोर देता है, जिन्हें हम हिंदू नाम से जानते हैं। उनका जोर तार्किक था कि वे न केवल वेदों के सार की ओर लौटें, बल्कि कर्म के माध्यम से सार का अनुवाद करें। उनके लिए इसके लिए सबसे पहले और आखिरी साधन शिक्षा थी। कठोर अनुशासन और प्रशिक्षण ही कुंजी थे। आचरण, ईमानदारी, नैतिक और नैतिक कार्य अंतिम कसौटी थे। इस प्रकार, पाखंड और दोहरी बातें एक अभिशाप थीं। निर्भीकता और अथक रूप से उन्होंने 'पाखंड' और बाहरी रूप को 'हठध र्मिता' और सांप्रदायिक संकीर्णता में कैद करके उजागर किया। उन्होंने यह कहने में किसी को नहीं छोड़ा कि किसी भी रूप का पाखंड कई सामाजिक बुराइयों की जड़ है।

शिवलिंग पर चूहों की घटना के बाद घर से निकलने के पहले क्षण से लेकर जोधपुर के महाराजा को मनाने तक की उनकी यात्रा एक उत्साही साध क और सुधारक की थी। उन्होंने पहाड़ों को पार किया, बद्रीनाथ, केदारनाथ और तुंगनाथ की चोटियों पर चढ़े, उन सभी लोगों के साथ रहे और उनसे बातचीत की जिन्हें ज्ञान का भंडार माना जाता था और उन सभी लोगों के साथ जो खुद को असंख्य संप्रदायों और पंथों के संरक्षक मानते थे। उन्होंने ब्रह्मो समाज के नेताओं, महर्षि देवेंद्रनाथ टैगोर और केशव चंद्र से बातचीत की, रामकृष्ण परमहंस से मिले, लेकिन उन्होंने इस बात पर जोर दिया और घोषणा की कि सनातन स्रोत उनकी प्राचीन शुद्धता में वेद हैं। भयंकर विरोध और शत्रुता के बावजूद विभिन्न संप्रदायों के पुजारियों और पंडितों के साथ उनके द्वारा की गई अनगिनत बहसें उनके अथक साहस और दृढ़ विश्वास और उद्देश्य के प्रति अडिग प्रतिबद्धता को दर्शाती हैं। उन बहसों (शास्त्रार्थ) के विवरणों को फिर से पढ़ते हुए, कोई भी इस तथ्य से चकित हो जाता है कि इस व्यापक और असीम रूप से विविध महासागर, जिसे 'हिंदू धर्म' कहा जाता है, की समझ, समझ और इस प्रकार प्रथाओं के मतभेदों पर सार्वजनिक रूप से और खुले तौर पर बहस करने के लिए एक अविश्वसनीय खुली जगह थी। उनकी चिंता गेहूं से भूसा अलग करने, पाठ्य स्रोतों से जीवन का एक दर्शन निकालने की थी जो आचरण और कार्रवाई का मार्गदर्शन करेगी। जैसा कि पहले बताया गया है, शिक्षा और प्रशिक्षण उनके समय के समाज को सुधारने और भारतीयों की एक नई पीढ़ी का पोषण करने के इस प्रयास की प्रमुख एजेंसियां थीं, जो 'जाति' और संप्रदाय से दूर रहेंगी और जो सुधार के लिए बौद्धिक रूप से सशक्त होंगी। सत्यार्थ प्रकाश (सत्य के प्रकाश के रूप में अनुवादित) में शिक्षा पर अध्याय आज जितने सार्थक हैं, उतने ही खुलासा करने वाले हैं। भारतीय राष्ट्र राज्य द्वारा मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा की बात करने से बहुत पहले, स्वामीजी ने शिक्षा की प्रध

ाानता की वकालत की थी। उन्होंने सलाह दी कि सभी बच्चों (लड़कियों और लड़कों दोनों को, बिना किसी भेदभाव के) को स्कूल भेजा जाना चाहिए और उन्हें शारीरिक, मानसिक और नैतिक शिक्षा दी जानी चाहिए।

उचित रूप से उन्होंने 'बच्चों का पालन-पोषण' अध्याय की शुरुआत शतपथ ब्राह्मण के प्रसिद्ध उद्धरण से की है, अर्थात,

"मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद"

('यह सत्यापित करें कि केवल वही व्यक्ति महान विद्वान बन सकता है जिसे तीन अच्छे शिक्षकों, अर्थात माता, पिता और गुरु का लाभ मिला हो')।

स्वामीजी ने माँ की देखभाल पर जोर दिया है, जो बच्चे के पहले शिक्षक के रूप में उसकी भूमिका के समान ही महत्वपूर्ण है, सही उच्चारण, उचित उच्चारण के मामले में। जहाँ वे संस्कृत सीखने पर जोर देते हैं, वहीं वे अन्य भाषाओं को सीखने की भी सलाह देते हैं। बच्चों के पालन-पोषण और शिक्षा से संबंधित दो अध्यायों में, स्वामीजी ने एक तर्कसंगत और व्यापक दृष्टिकोण अपनाया है। वे चाहते हैं कि लोग भौतिक शरीर और शरीर के चयापचय की कार्य प्रणाली को जानें और अंधविश्वास, ज्योतिष और बाकी चीजों के बहकावे में न आएं। यह सलाह ऐसे समय में आई है, जब शारीरिक स्वास्थ्य और प्राथमिक शिक्षा के बारे में अज्ञानता को मिटाने के लिए यह एक क्रांतिकारी कदम था। उनके लिए जो माता-पिता अपने बच्चों की शिक्षा की उपेक्षा करते हैं, वे उनके 'सच्चे दुश्मन' हैं। माता-पिता का सबसे बड़ा कर्तव्य अपने बच्चों को शिक्षित करना है। ज्ञान प्राप्त करना और सत्य व नैतिक आचरण का पालन करना शिक्षा के लक्ष्य हैं। उनके लिए, सभी को शिक्षित होना चाहिए, राजकुमारी या भिखारी या कम संपन्न लोगों के बेटे और बेटियों को। उन्होंने एक समतावादी स्कूल प्रणाली की वकालत की। ये उस चीज की नवजात शुरुआत थी जिसे हम पड़ोस के स्कूल कहते हैं। हम अपनी कीमत पर जानते हैं कि इन लक्ष्यों के विपरीत, अमीरों और गरीबों के लिए खुले शैक्षिक अवसरों के बीच एक बड़ा अंतर है। हमारे शब्दों में अनुवादित, स्वामीजी पड़ोस के स्कूलों की एक प्रणाली की स्थापना की वकालत कर रहे थे, जहां सभी-विभिन्नसामाजिक-आर्थिक स्तरों से-एक जैसी शिक्षा दी जाएगी। अफसोस, गुरुकुल प्रणाली और डीएवी स्कूलों की सफलता के बावजूद, सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों में तथाकथित कुलीन स्कूलों और अन्य के बीच एक बड़ी असमानता है। स्वामीजी ने बार-बार दोहराया कि सभी के साथ 'एक जैसा व्यवहार किया जाना चाहिए, चाहे वे अमीर हों या गरीब'। आजादी के छह दशक बीत जाने के बावजूद हम इस 'लक्ष्य' को हासिल करने से बहुत दूर हैं। स्वामीजी शिक्षा की विषय-वस्तु पर आगे विस्तार से प्रकाश डालते हैं और शिक्षण और सीखने की विषय-वस्तु, पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र पर विस्तार से चर्चा करते हैं। वे इस प्रणाली के बारे में बहुत स्पष्टता से बताते हैं। वे इस बात पर जोर देते हैं कि शिक्षा से शारीरिक और मानसिक क्षमताएँ विकसित होनी चाहिए। वेदों के मूल सिद्धांतों पर आधारित नैतिक मूल्यों को आत्मसात करना बहुत जरूरी है।

अंत में, अपने विशिष्ट तरीके से, वे उन सभी को चेतावनी देते हैं जो समाज के किसी भी वर्ग को ज्ञान प्राप्त करने से रोकना चाहते हैं। वे स्पष्ट रूप से कहते हैं: सभी पुरुषों और महिलाओं, यानी पूरी मानव जाति को, क्षत्रिय, शूद्र, महिलाओं को अध्ययन और ज्ञान प्राप्त करने का अधिकार है। वे बड़े आत्मविश्वास के साथ वेदों, विशेष रूप से यजुर्वेद की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं, ताकि इस बात पर जोर दिया जा सके कि 'ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, महिलाएं, नौकर, निम्न से निम्न व्यक्ति वेदों को सीख और प्रचार कर सकते हैं'।

'इसलिए सभी को ज्ञान प्राप्त करना चाहिए, सद्गुणों का अभ्यास करना चाहिए, बुराइयों से दूर रहना चाहिए...'

ज्ञान समाज के किसी विशेष वर्ग या लिंग का विशेषाधिकार नहीं था।

वे अपने तर्क को उसके तार्किक निष्कर्ष तक ले जाते हैं। एक प्रश्न के उत्तर में, वे कहते हैं, यदि ज्ञान सभी के लिए नहीं था, तो भगवान ने उनके (शूद्रों और महिलाओं) शरीर में वाणी

और श्रवण के अंगों का निर्माण क्यों किया? संक्षेप में, स्वामीजी वेदों की व्याख्या तो कर ही रहे हैं, साथ ही वर्ण, जाति या लिंग के आधार पर भेदभाव न करने की भी जोरदार वकालत कर रहे हैं। शरीर और मन की अच्छी शिक्षा देने के लिए, वे महिलाओं लड़कियों को अच्छी शारीरिक शिक्षा देने की सलाह देते हैं। शारीरिक व्यायाम और बचाव और हमले (गटक) के कौशल के अलावा, स्वामीजी का मानना घ्है कि महिलाओं को लेखांकन और व्यापार के कौशल और बुनियादी चिकित्सा का ज्ञान हासिल करना चाहिए। इसके अलावा, गणित और कला दोनों को समान महत्व दिया जाना चाहिए। बेशक, व्यवस्था में नैतिक और नैतिक मूल्यों को शामिल किया जाना चाहिए। उनके लिए 'ज्ञान ही एकमात्र अक्षय खजाना है, जितना अधिक आप इसे खर्च करेंगे, उतना ही यह बढ़ता जाएगा'। केवल शिक्षा ही व्यक्ति को बदल सकती है और समाज को सुधार सकती है।

सत्यार्थ प्रकाश में ये कथन गुरुकुलों और डीएवी स्कूल प्रणाली की प्रेरणा थे। स्वामी श्रद्धानंद द्वारा स्थापित पूर्व में एक तरह की ऊर्ध्वाधर शिक्षा प्रदान की गई थी, विशेष रूप से गुरुकुल कांगड़ी, डीएवी स्कूल प्रणाली व्यापक-आधारित थी, सभी जातियों और वर्गों के लिए खुली थी और भारतीय परंपरा की ज्ञान प्रणाली के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा और आधुनिक विषयों पर परिचित और कमांड पर समान जोर दिया गया था। एक संतुलन हासिल करने की कोशिश की गई थी। स्वामीजी के आदर्शों से प्रेरित शिक्षा प्रणालियों और उनके द्वारा शुरू की गई संस्था, आर्य समाज की भूमिका ने भारतीय समाज को सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कई लोग संकीर्ण संप्रदायवाद की बेड़ियों से अलग हो गए, साथ ही अंधविश्वास और भौतिक जीवन की समस्याओं को हल करने के लिए नासमझ अनुष्ठान में विश्वास भी। संदेश का प्रसार और संस्थानों की स्थापना तेज, लगभग उल्कापिंड जैसी थी, खासकर उत्तरी भारत में। जाति, सामाजिक स्थिति के आधार पर कोई भेदभाव नहीं था। वास्तव में, आर्य समाज के कई अनुयायियों ने अपने अंतिम नामों का उपयोग करना छोड़ दिया ताकि उनकी जाति संबद्धता का पता न चले। 'कुमार' जैसे सामान्य अंत का उपयोग किया जाने लगा। आज हमें इस आंदोलन का पुनर्मूल्यांकन करना होगा जब 'जाति' और धार्मिक संप्रदाय संबंधी संबद्धताएँ हमारी राजनीतिक व्यवस्थाओं के भीतर प्रवेश कर रही हैं।

तो क्या जन्म या जाति के आधार पर अनुत्पादक सामाजिक पदानुक्रम को फिर से स्थापित करने में वृद्धि हुई है? इसने निश्चित रूप से सामाजिक ताने-बाने को कमजोर किया है, और शासन की लोकतांत्रिक प्रणाली के कुशल कामकाज पर नकारात्मक प्रभाव डाला है?

लिंग स्वाभाविक रूप से एक बहुत चर्चित, बहस का मुद्दा है, यह संकट और अशांति का कारण भी है" स्वामीजी न केवल लड़कियों को शिक्षित करना चाहते थे और उन्हें समान अवसर देना चाहते थे, बल्कि वे बाल विवाह की निंदा करके और भी आगे बढ़ गए, और सही भी। उन्होंने विधवा पुनर्विवाह की वर्जना को भी चुनौती दी। संक्षेप में, वे चाहते थे कि महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार, विशेषाधिकार प्राप्त हों।

इस प्रकार, जिन मुद्दों को स्वामीजी बल के सामने लाए और जिनके लिए लड़े, वे आज भी हमारे सामने हैं, भले ही उनके निधन के बाद एक सदी और चौथाई में कई बदलाव हुए हों। हम प्राथमिक और प्रारंभिक स्तर की मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के कहीं भी करीब नहीं हैं, लोकतंत्र में वोट जुटाने के आधार के रूप में 'जाति' अपने नकारात्मक अवतार में दिखाई देने लगी है और पहले से भी बदतर रूपों में लैंगिक असमानता हमारे सामने है। क्या हम फिर से संतुलन और स्वास्थ्य बहाल कर सकते हैं? भारत के बुद्धिजीवी, आध्यात्मिक नेता समाज सुधारक थे, उनके विचार और कार्य एक जैसे थे। क्या हम उनका अनुकरण करके ऐसे भारत को आकार दे सकते हैं जो उतना ही गहराई से निहित होगा, उतना ही व्यापक रूप से 'समावेशी' होगा और अपने मूलभूत मूल्यों में उतना ही दृढ़ होगा।

स्वामी दयानंद की आध्यात्मिक प्रतिभा

- रेव. वाल्सन थम्पू

मैं इस सभा को संबोधित करने के लिए बुलाए जाने पर गौरवान्वित महसूस कर रहा हूँ, जिसका उद्देश्य महर्षि दयानंद की श्रद्धापूर्ण यादों को ताजा करना और आर्य समाज आंदोलन को पुनर्जीवित करना है। इस अवसर पर मैं एक महान विश्वास के साथ-साथ एक गहरी चिंता भी साझा करता हूँ। सबसे पहले, विश्वास। मुझे पूरा विश्वास है कि महर्षि दयानंद में हमारे पास एक दुर्लभ आध्यात्मिक प्रतिभा थी, जिसकी दृष्टि और मिशन ने भारतीय संपर्क में अभूतपूर्व आध्यात्मिक हलचल का प्रतिनिधित्व किया। मैं समान रूप से आश्वस्त हूँ कि इस आंदोलन के आध्यात्मिक सार को पुनर्जीवित करना उन लोगों के लिए समय की अनिवार्यता है जो आर्य समाज की परवाह करते हैं। आर्य समाज, अपने प्रामाणिक संस्करण में, आध्यात्मिक पतन और दिशाहीनता का एक प्रभावी प्रतिकार है जिसे हम सांप्रदायिकता, जातिवाद और धार्मिक रूढ़िवाद के रूप में अपने चारों ओर देखते हैं, जो सभी भारत के चेहरे को काला करते हैं और इसकी वास्तविक महानता का गला घोंटते हैं। दूसरा, चिंता। इस सामग्री में मेरी चिंता मेरे ऊपर बताए गए विश्वास से पैदा हुई है। दुःख की बात है कि पिछले एक सदी में आर्य समाज अपने आध्यात्मिक स्रोतों से दूर चला गया है। ऐसा लगता है कि इसने अपनी विशिष्टता खो दी है और अपने मिशन की उत्साही भावना खो दी है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस अनूठे आंदोलन को उन्हीं ताकतों ने पीछे छोड़ दिया है, जिन्हें इसका उद्देश्य भारत के आध्यात्मिक भूगोल से भगाना और मिटाना था। इस संबंध में हम केवल तीन बिंदुओं पर विचार करते हैं। आंदोलन का मुख्य आध्यात्मिक एजेंडा-अर्थात भारतीय समाज को जाति और अंधविश्वास से मुक्त करना और इसके कुलीन वर्ग को बढ़ाना-लगभग भुला दिया गया है। हमारे समाज में इसने जो बौद्धिक और सांस्कृतिक जीवंतता जागृत की, वह अब आंदोलन की ताकत नहीं लगती। कई उत्कृष्ट हिंदू नेता और विचारक, जिनसे मैं मिलता हूं, दुःख की बात है कि पूर्व आर्य समाजी हैं। समाज ने अतीत में भारतीय धार्मिकता के स्थिर कुंड में बौद्धिक और आध्यात्मिक उत्साह को उत्प्रेरित करके हमारे देश की बहुत बड़ी सेवा की थी

तीसरा पहले दो से भी ज़्यादा महत्वपूर्ण है, और संभवतः दोनों का स्रोत हो सकता है। और यही वह पलायनवादी चरित्र है जिसने वर्तमान समय में आर्य समाज आंदोलन को गुलाम बना रखा है। इस स्थिति को सही परिप्रेक्ष्य में देखने के लिए, हमें केवल धार्मिकता और सच्ची आध्यात्मिकता के बीच के अंतर को समझना होगा। धार्मिकता, हर समय, पलायनवाद के प्रति संवेदनशील होती है। यह, मोटे तौर पर, पवित्र स्वार्थ से प्रेरित होती है जो ईश्वर को खुश रखने के लिए अत्यधिक उत्सुक रहती है, जिसका दोहरा उद्देश्य अधिकतम कृपा प्राप्त करना और ईश्वरीय नाराजगी को कम करना होता है। ऐसी धार्मिकता अनिवार्य रूप से स्वार्थी और लेन-देन वाली होती है, जो लाभ और हानि के हिसाब से संचालित होती है। यह समाज में आध्यात्मिक मूल्यों को प्रबल बनाने के लिए वास्तविकताओं की दुनिया से जुड़ने की उत्सुकता से चिह्नित नहीं होती है। आध्यात्मिकता इसके बिल्कुल विपरीत है। यह दिए गए संदर्भ की वास्तविकताओं से जुड़ना है, जो व्यक्तिगत या स्वार्थी हितों से कहीं अधिक उच्चतर चीज द्वारा आकार लेती है। इसीलिए प्रेम, करुणा, सत्य और न्याय जैसे सार्वभौमिक मूल्य आध्यात्मिकता के मूल हैं, जबकि धार्मिक दृष्टि से हम इनका केवल दिखावा ही कर सकते हैं।

यदि स्वामी दयानंद इस देश में पैदा हुए अनेक धार्मिक नेताओं में से एक होते, तो वे सुधारक और सामाजिक कार्य कर्ता नहीं होते। वे निस्संदेह आध्यात्मिक रूप से महान व्यक्ति नहीं होते। मैं दयानंद को आध्यात्मिक प्रतिभा क्यों मानता हूँ ? सबसे पहले, उन्होंने धर्म में तर्क की विजय का प्रतिनिधित्व किया। आम धारणा के विपरीत, तर्क ही सच्चे धर्म का प्रकाश है। केवल वे लोग जो आध्यात्मिक रूप से अशिक्षित हैं, वे तर्क और आस्था को विपरीत मानते हैं। इसके बजाय, वे आध्यात्मिकता के रथ को खींचने वाले दो घोड़े हैं। आस्था सत्य और अंतर्दृष्टि को समझती है और उन तक पहुँचती है जो रहस्योद्घाटन के दायरे से संबंधित हैं। लेकिन रहस्योद्घाटन की फ़सल को तर्क के पेट में पचाना पड़ता है। जो तर्कसंगत नहीं है, उसे धर्म के भंडार में कोई स्थान नहीं मिलना चाहिए। यदि इस पर जोर नहीं दिया गया तो

धर्म शीघ्र ही अंधविश्वास, अंधविश्वास और रूढ़िवादिता में बदल जाएगा।

महर्षि दयानंद उन सभी लोगों के लिए आदर्श हैं जो अपने धर्म को गंभीरता से लेते हैं। दयानंद से पहले कितने युवा धार्मिक लोगों ने चूहों को रात में मूर्तियों को चढ़ाया गया भोजन खाते देखा होगा! उनमें से किसी को भी पढ़ने और उसके अर्थ को तार्किक निष्कर्ष तक पहुँचाने का साहस या आत्मा की स्वतंत्रता क्यों थी? बहुत संभव है कि वे अपने रूढ़िवादी धार्मिक संस्कारों से अंधे हो गए थे और तर्कसंगत रूप से सोचने में असमर्थ थे। अध्यात्म हमें अंध विश्वास के बंधन से बाहर निकलने और तर्क और विश्लेषण के लिए ईश्वर प्रदत्त क्षमता का उपयोग करने का साहस देता है, जो हमारी आंतरिक स्वतंत्रता का रहस्य है। यदि इस आध्यात्मिक कर्तव्य का पूरी तरह से पालन नहीं किया जाता है, तो हम धर्म को मुक्ति और सशक्तीकरण के एजेंट के बजाय शोषण के साधन में बदल देंगे।

दूसरा, हर वास्तविक आध्यात्मिक नेता एक धार्मिक सुधारक भी रहा है। धर्म के क्षेत्र में दो प्रकार के नेता होते हैं। हम धार्मिक नेताओं को ज्यादातर रूढ़िवाद और यथास्थिति के संरक्षक के रूप में जानते हैं। उनका एजेंडा मौजूदा सत्ता संरचनाओं का समर्थन और वैधता प्रदान करना है, जिससे वे किसी न किसी तरह से लाभ उठाते हैं। उनके पास तर्कसंगत सोच के लिए बहुत अधिक उपयोग नहीं है, और अक्सर सत्य, न्याय और करुणा जैसे मूल्यों के प्रति उदासीन होते हैं। वे धर्म के तंत्र की रक्षा, संरक्षण और महिमा करने के लिए इतने उत्सुक हैं कि वे धर्म के अर्थ के प्रति अंधे हो जाते हैं। वे धार्मिक प्रतिष्ठान को ईश्वर समझने की भूल करते हैं। सौभाग्य से, एक और प्रकार का नेतृत्व भी है, लेकिन यह पहले की तुलना में दुर्लभ है। उनके लिए, धर्म ईश्वर को जानने और सम्मान करने का आह्वान है। वे ईश्वर को मूल्यों के रूप में अनुभव करते हैं: सार्वभौमिक भाईचारा, सत्य, प्रेम, करुणा और न्याय जैसे मूल्य। उनका मुख्य एजेंडा भौतिक लाभ के लिए ईश्वर को दूध देने वाली गाय में बदलना नहीं है, बल्कि व्यक्तिगत और सामाजिक स्तर पर हमारी मानवता के सर्वश्रेष्ठ का जश्न मनाने के लिए ईश्वर को आमंत्रित करना है। यह उन्हें अपनी धार्मिक परंपरा के आध्यात्मिक मूल में प्रगतिशील क्षय के बारे में विशेष रूप से चिंतित करता है, जो हर धर्म में होता है। इतिहास के माध्यम से अपने मार्ग पर, प्रत्येक धर्म अपने आध्यात्मिक मूल से धीरे-धीरे अलग हो जाता है। समय के साथ, एक धर्म अपनी आध्यात्मिकता का विरोधाभास बन जाता है। महर्षि दयानंद वैदिक दर्शन और लोकप्रिय हिंदू धर्म के बीच की खाई से विशेष रूप से स्तब्ध थे। इसलिए वे आध्यात्मिक युद्धघोष के साथ सामने आए, 'वेदों की ओर लौटो'। भले ही उन्होंने कुछ और न किया होता, लेकिन यह पहल अपने आप में एक प्रामाणिक आध्यात्मिक मिशन वाले व्यक्ति के रूप में उनकी साख स्थापित कर देती।

धार्मिक सुधार की प्रवृत्ति में दो विपरीत अभिव्यक्तियाँ हैं। हमें आध्यात्मिक अभिव्यक्ति को उसके सांप्रदायिक समकक्ष से अलग करना चाहिए। जहाँ आध्यात्मिक नेता अपनी धार्मिक परंपरा को सुधारने और पुनर्जीवित करने के लिए उत्सुक होता है, वहीं उसका सांप्रदायिक समकक्ष अन्य सभी धर्मों को बदनाम करने और सुधारने के लिए उत्सुक होता है। वह इस गलत धारणा से प्रेरित है कि अन्य सभी धर्मों को नीचा दिखाने और उनके अनुयायियों को कलंकित करने मात्र से वह अपने धर्म की बहुत बड़ी सेवा करता है। बेशक, एक आध्यात्मिक नेता को अन्य धर्मों में क्या बुरा है, इसके प्रति अंधा रहने की जरूरत नहीं है, जो महर्षि दयानंद नहीं थे। लेकिन उनकी चिंता, सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, अपने धर्म को सुधारने की है, जिसे दयानंद ने एक दृढ़ उद्देश्य के साथ किया।।

इस बिंदु पर हमें एक अंतर करना चाहिए जो दयानंद के आध्यात्मिक मिशन के महत्व को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। आध्यात्मिकता की दुनिया में उनका सबसे बड़ा योगदान हिंदू धर्म में सुधार नहीं था यह था कि वे धर्म के विचार को सुधारने के लिए एक स्पष्ट आह्वान थे। यह वह था, न कि अन्य धर्मों के प्रति उनकी शत्रुता, जिसने दयानंद को उन सभी की आलोचना करने के लिए प्रेरित किया। एक आदर्श दृष्टिकोण से, सभी धर्म अपने आध्यात्मिक मानदंडों और लक्ष्यों से कमतर हैं। इसलिए हर धर्म में विश्वास करने वालों को अपने धर्म को समझने और उसका पालन करने के तरीके के बारे में गंभीर रूप से सतर्क रहने की आवश्यकता है। आत्म- आलोचना की यह क्षमता किसी धर्म के स्वास्थ्य और मजबूती को साबित करती है। दूसरी ओर, जिम्मेदार आलोचना के प्रति असहिष्णुता उस धर्म में आई गिरावट का संकेत है। दयानंद ने जो आध्यात्मिक अनुशासन विकसित किया है - संदेह करना, बहस करना और, यदि आवश्यक हो, तो असहमति जताना-वह सार्वभौमिक स्वीकृति के योग्य है। एक नियम के रूप में, सांप्रदायिक तत्व आत्म-आलोचना करने में असमर्थ हैं और ठीक इसी कारण से, दूसरों की

आलोचना करने में खुश होते हैं। आध्यात्मिक दृष्टिकोण से, हालांकि, आत्म-आलोचना की क्षमता ही वह अधिकार है जो किसी व्यक्ति को अन्य धर्मों की आलोचना करने के लिए भी प्रदान करता है। यीशु ने कहा, "पहले अपनी आंख का लट्ठा निकालोय तब तुम अपने भाई की आंख का तिनका साफ देख पाओगे।" आध्यात्मिकता दूसरों का न्याय करने से नहीं रुकती, बल्कि यह सुनिश्चित करती है कि निर्णय सत्य पर आधारित हों, न कि पूर्वाग्रह, अज्ञानता और दुर्भावना पर।

एक सच्चे धार्मिक नेता की आध्यात्मिकता का तीसरा पहलू समाज के पीड़ितों को मुक्त करने और सशक्त बनाने की उत्सुकता है। दयानंद के लिए, आध्यात्मि कता मानव मुक्ति का एजेंडा था। और इसी संबंध में उन्होंने जाति-ग्रस्त हिंदू धर्म को बहुत कमतर पाया। उनके लिए मूर्ति-पूजा और जातिवाद के बीच एक सहज संबंध था, जिस पर हम अभी विचार करेंगे।

दयानंद का आध्यात्मिक मिशन ईश्वर की संतान के रूप में प्रत्येक मनुष्य के अतुलनीय मूल्य के बारे में एक अद्वितीय विश्वास से प्रेरित था। यही वह बात थी जिसने जाति उत्पीड़न, सती और हिंदू पक्षों की दुर्दशा के खिलाफ उनके धार्मिक आक्रोश को भड़काया। एक समय उन्हें एहसास हुआ कि जाति, जिसने जन्म के आधार पर लाखों लोगों को दोषी ठहराया, वैदिक धर्म पर सबसे काला धब्बा है। उनके लिए, सभी मनुष्य जन्म से समान हैं। हर कोई शूद्र के रूप में जन्म लेता है और आध्यात्मिक विकास की इस अवस्था से बाहर निकलना हर मनुष्य का अधिकार और कर्तव्य है। शूद्र के रूप में जन्म लेने के बावजूद, हममें से किसी को भी शूद्र- अवस्था में नहीं रहना हैय हमें कुलीनता की ओर विकसित होना है। धर्म का काम लोगों को उनकी शूद्र दुर्दशा से उनके आर्य (या महान) भाग्य की तीर्थयात्रा में मदद करना है। यह आध्यात्मिकता की गाथा है और इस मूलभूत मानवीय आवश्यकता, या आध्यात्मिक प्यास को टालने या नकारने वाली किसी भी चीज को धर्म के क्षेत्र में बर्दाश्त नहीं किया जाना चाहिए।

दयानंद ने मूर्ति पूजा और जातिवाद के बीच एक आध्यात्मिक संबंध स्थापित किया। पदार्थ को पूर्ण स्वायत्तता और वास्तविकता प्रदान करते हुए, उन्होंने दृढ़ता से कहा कि ईश्वर को भी पदार्थ में सन्निहित नहीं किया जा सकता है या उसकी सीमाओं तक सीमित नहीं किया जा सकता है। मैं इस तर्क को एक सामाजिक विस्तार देना चाहता हूँ। मूर्ति पूजा के साथ समस्या यह है कि मैं इसे 'सीमा का भ्रम' कहता हूँ। यह भ्रम पैदा करता है कि ईश्वर की उपस्थिति पूजा स्थल के गर्भगृह या परिसर तक ही सीमित है। अजीब बात है कि बहुत से लोग इसके और इस प्रमुख आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के बीच स्पष्ट विरोधाभास को नहीं समझते हैं कि ईश्वर, निर्माता होने के नाते, इतना सीमित नहीं हो सकता है। वह सर्वव्यापी और सर्वज्ञ है। वह बोर्डरूम, बेडरूम और लेबर रूम में समान रूप से मनुष्यों से मिलता है। मूर्ति पूजा के समर्थन में दिए गए व्यावहारिक तर्कों के अलावा, मूर्ति पूजा का अंतिम परिणाम एक खंडित विश्व दृष्टिकोण और सामाजिक व्यवस्था है। ईश्वर और सभी सकारात्मक मूल्य पूजा स्थलों तक ही सीमित हैं और समाज पर मनुष्य का दावा है और इसे नैतिक जंगल में बदल दिया गया है। ऐसा लगता है, जैसे हम मंदिर, मस्जिद और चर्च बनाने में खुश हैं, ताकि भगवान को समाज से बाहर रखा जा सके और हम धरती को अपना स्वतंत्र अधिकार मान सकें। यह मूर्ति पूजा और स्थानिक सामाजिक अन्याय के बीच का संबंध है।

हमारे पास मानव स्वभाव और नियति के बारे में सबसे बढ़िया धारणाएँ और आदर्श हैं, लेकिन हमारे ट्रैक रिकर्हड में इसके लिए कुछ भी नहीं है। सिर्फ एक उदाहरण लें, हमारे समाज में महिलाओं-खासकर विधवाओं-की दुर्दशा का। अपने देवताओं और धर्मग्रंथों में हिंदू धर्म महिलाओं को आदर्श मानता है, लेकिन महिलाओं की सामाजिक दुर्दशा बिल्कुल अलग है। आश्चर्य नहीं कि स्वामी दयानंद ने लड़कियों को शिक्षित करने और विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति देने की आवश्यकता पर जोर दिया।

यह बहुत दुख की बात है कि महर्षि दयानंद द्वारा शुरू किया गया सामाजिक मुक्ति का महत्वपूर्ण आध्यात्मिक एजेंडा अब पीछे छूट गया है। यदि उनके अनुयायी दशकों तक इस मिशन के प्रति सच्चे और वफादार रहे होते, तो आज हम एक अलग और बेहतर समाज में रह रहे होते। हमारे राष्ट्र के पिछले छह दशकों में जाति, सांप्रदायिकता और महिलाओं के उत्पीड़न जैसी बुराइयों में मात्रात्मक रूप से वृद्धि ही हुई है। आश्चर्य की बात है कि आर्य समाजी-स्वामी अग्निवेश जैसे कुछ अपवादों को छोड़कर- भ्रष्टाचार की इस नृत्यकला को चुपचाप देखते रहते हैं। कभी- कभी, इसके सांप्रदायिक हाशिये अंधविश्वास और असहिष्णु कट्टरवाद के एजेंटों की सहायता करते हैं और उन्हें बढ़ावा देते हैं। किसी को यह आभास होता है कि आर्य समाज अब भारतीय संदर्भ में मुक्तिदायक और परिवर्तनकारी जुड़ाव में नहीं है। यह

सोचने का समय आ गया है कि क्या आर्य समाज अब एक आंदोलन है या सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए यह एक स्मारक बन गया है। स्मारक, संयोग से, एक आंदोलन की मृत्यु का प्रतीक है। यह, सबसे अच्छा, एक ममीकृत उंगली है जो उस आंदोलन की ओर इशारा करती है जो था! इसमें कोई संदेह नहीं कि आर्य समाज आंदोलन आज चौराहे पर खड़ा है। यहां से यह और भी अप्रासंगिक हो सकता है या नवीनीकरण और पुनः जुड़ाव का रास्ता अपना सकता है। विडंबना यह है कि समाज की व्यावहारिक समस्याओं में से एक इसकी भौतिक संपदा है। इसके पास पर्याप्त भू-संपत्ति और संस्थागत परिसंपत्तियां हैं। यह अपने आप में कोई समस्या नहीं है। लेकिन जो चीज इसे एक वास्तविक अभिशाप में बदल देती है, वह है उपलब्ध संसा धनों के अनुरूप मिशन का अभाव। इस स्थिति में, संचित भौतिक संसाधन उन लोगों की लालच को बढ़ाते हैं जो आंदोलन का लेबल तो रखते हैं लेकिन आध्यात्मिक रूप से इससे अलग-थलग हैं। यही वह चीज है जिसने समाज को आत्म-पराजित मुकदमेबाजी और राजनीतिक ध्रुवीकरण में धकेल दिया है। एक नियम के रूप में, स्पष्ट मिशन की अनुपस्थिति में धन अपने आप में एक लक्ष्य बन जाता है। भौतिक संसाधन, जो किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए होते हैं, भगवान बन जाते हैं। यह असीमित और शिकारी लालच को सक्रिय करता है।

किसी आंदोलन में किस तरह के नेता आते हैं या आते हैं, यह उस आंदोलन की वास्तविक दुर्दशा का एक महत्वपूर्ण संकेत है। जब यह स्वस्थ और गतिशील होता है, तो इसके नेता आदर्शवादी और दूरदर्शी होते हैं। लेकिन जब यह बीमार होता है, तो यह स्वार्थी और क्रूर अवसरवादियों को आकर्षित करता है, जो अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति में पूरी तरह से बेईमान होते हैं।

इससे समाज की दूसरी बड़ी समस्या उत्पन्न होती है: समझौता करने की भावना, जो इसके मिशन की भावना को मार देती है। लोभ से समझौता करने की भावना पैदा होती है। इसके लिए किसी आदर्शवादी या धार्मिक संगति की कोई आवश्यकता नहीं है। लोभ में, व्यक्तिगत लाभ ही एकमात्र प्रेरक कारक होता है और जो भी इस उद्देश्य की पूर्ति करता है, उसका स्वागत है। यही कारण है कि आर्य समाजियों के एक वर्ग की संघ परिवार से निकटता है, जो भाजपा के नेतृत्व वाले एनडीए के कार्यकाल के दौरान स्पष्ट हो गई। इस तरह का समझौता आंदोलन की भावना के लिए जहर है। जब तक इसे नियंत्रित और समाप्त नहीं किया जाता, तब तक यह उस आंदोलन की निश्चित मृत्यु की ओर ले जाता है। समाज को अब समझौते की बेड़ियाँ तोड़कर प्रतिबद्धता के पंख लगाने की सख्त जरूरत है। प्रतिबद्धता महर्षि के व्यक्तित्व और करिश्मे का जादू थी। अक्सर आर्य समाज के सार्वजनिक समारोहों में भाग लेने के दौरान मुझे ऐसा लगता है कि यह किसी खास दिशा में नहीं जा रहा है। समारोहों में नेताओं के महत्व को दर्शाया जाता है और दिग्गजों को माला पहनाने की अंतहीन रस्में एजेंडे को लगभग नजरअंदाज कर देती हैं। समाज के सामने तीसरी समस्या इसकी भावना और मूल दृष्टि का खत्म होना है। आर्य समाज भारत में एक महान समाज के विकास के लिए एक व्यापक सामाजिक-आध्यात्मिक दृष्टि है। इस अर्थ में, यह एक धर्म नहीं बल्कि एक आंदोलन है जिसकी वैश्विक प्रासंगिकता है। और अब वैश्विक स्तर पर अपनी सही भूमिका निभाने के लिए मंच तैयार है। लेकिन ऐसा करने के लिए, समाज को गंभीर आत्म-मूल्यांकन और आध्यात्मिक नवीनीकरण की प्रक्रिया से गुजरना होगा। इसे दयानंद की भावना को पकड़ना होगा। दयानंद को पशु नहीं बनाया जाना चाहिए। वे लक्ष्य नहीं हैं। वे जंगल में पुकारने वाली आवाज थे, जो लोगों को नवीनीकरण और उत्थान के लिए बुला रहे थे। वे अपने समय की सीमाओं से परे नहीं थे। लेकिन यह कहना जरूरी है कि उन्होंने अपनी क्षमता के अनुसार उनसे ऊपर उठने की कोशिश की। उन्होंने अपने अनुयायियों को जो चुनौती दी थी, वह थी आध्यात्मिक तर्क के नजरिए से दिए गए संदर्भ को समझना। यह चुनौती थी ईश्वर के प्रेम, करुणा, सत्य और न्याय को हमारे सामूहिक अस्तित्व की नसों और ऊतकों में व्याप्त करना और सभी प्रकार के उत्पीड़न और शोषण को समाप्त करना, विशेष रूप से धर्म के बहाने किए जाने वाले शोषण को। महर्षि दयानंद धर्म को मुक्ति और सामाजिक उत्थान के साधन में बदलने का एक सार्वभौमिक निमंत्रण हैं। वे उत्पीड़न की ताकतों और उत्पीड़न को वैध बनाने वाले रूढ़िवाद के एजेंटों के खिलाफ एक निर्मम युद्ध का आदेश देते हैं। आर्य समाज एक ऐसा आंदोलन है जो मानव प्रजाति की श्रेष्ठता का जश्न मनाने के लिए प्रेरित है, जो ईश्वर में सभी वास्तविकताओं के स्रोत और सच्ची मानवता के मार्गदर्शक प्रकाश के रूप में एक प्रबुद्ध विश्वास पर आधारित है। हमारे राष्ट्रीय परिदृश्य में इसकी प्रासंगिकता एक स्पष्ट वास्तविकता है। इसके वर्तमान संरक्षक इसे कितना समझते हैं और इसे संबोधित करने का साहस रखते हैं, यह तो समय ही बताएगा।

-शेष पृ. २० पर

पितृ-यज्ञ

- स्व. पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

'पितृ-यज्ञ' दो शब्दों से मिलकर बना है। एक **''पितृ''** और दूसरा **''यज्ञ''** ।

'पितृ' का अर्थ है बाप। माँ और बाप दोनों को भी **'पितृ'** कहते हैं। जैसे **''माता च पिता च पितरौ'** । **'माता'** और **'पिता'** दोनों शब्दों का जब द्वन्द्व समास बनाते हैं तो **'पितरौ'** बनता है। अर्थात् **'पितृ'** अर्थ है माँ और बाप दोनों।

'पितृ' का प्रथमा विभक्ति में **'पिता'** हो जाता है। कुछ संस्कृत न पढ़े हुए लोग समझते हैं कि **'पिता'** जीते हुए बाप को कहते हैं और **'पितर'** मरे हुए बाप को। परन्तु यह बात नहीं है। असली शब्द **'पितृ'** है। जब उसका कर्त्ता-कारक बनाते हैं तो **'पिता'** हो जाता है। जब कर्म-कारक बनाते हैं तो **'पितरम्'** हो जाता है। कर्त्ता-कारक बहुवचन में **'पितरः'** होता है। जैसे **'मम पिता गच्छति'** का अर्थ है **'मेरा बाप जाता है'** । **'पितरमपश्यम्'** का अर्थ है **'मैंने बाप को देखा'** । **'तेषां पितर आयान्ति'** का अर्थ है **'उनके बाप आते हैं'** ।

इस प्रकार **'पितृ'** या **'पितर'** । शब्दों में मौत का कुछ संकेत नहीं है। और यह कहना गलत है कि **'पितृ'** या **'पितर'** मरे हुए बाप के लिए आता है जीते हुए के लिए नहीं। दादे, परदादे या दादी और परदादी के लिए भी **'पितृ'** शब्द आता है।

'यज्ञ' शब्द का अर्थ है पूजा, सत्कार। कुछ लोग समझते हैं कि **'यज्ञ'** शब्द और **'हवन'** शब्द का एक अर्थ है। यह भी गलत है। हवन को भी यज्ञ कहते हैं परन्तु यज्ञ अन्य अर्थों में आता है। 'यज' धातु जिससे **'यज्ञ'** शब्द बना है, देवपूजा, संगतिकरण और दान इन तीन अर्थों में आती है। इसलिए **'यज्ञ'** का अर्थ केवल हवन नहीं है। उदाहरण के लिए **'ब्रह्मयज्ञ'** का अर्थ है स्वाध्याय या ईश्वर का ध्यान। अतिथि यज्ञ का अर्थ है **'मेहमान की खातिरदारी करना'** । यहाँ न तो होम या हवन से कुछ सम्बन्ध है, न आहुति देने से, न किसी पशु आदि के काटने से। देखिए नमुस्मृति अध्याय ३, श्लोक ७०-

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञश्च तर्पणम् ।
होमो दैवो बलिर्भौतो नृयज्ञोऽतिथिपूजनम् ।।

अर्थात् पढ़ने पढ़ाने का नाम ब्रह्मयज्ञ है। तर्पण को पितृयज्ञ कहते हैं। होम देवयज्ञ कहलाता है। पशुओं को भोजन देने का नाम भूतयज्ञ है और अतिथि के सत्कार को नृतज्ञ कहते हैं। हमने यहाँ यह श्लोक इसलिए दिया है कि केवल **'देवयज्ञ'** में **'यज्ञ'** शब्द का अर्थ 'होम' है। अन्यत्र यज्ञ का अर्थ पूजा और सत्कार ही है।

आश्वलायन गृह्यसूत्र में भी ऐसा ही है।

अर्थात् **पञ्चयज्ञो देवयज्ञो भूतयज्ञः पितृयज्ञो ब्रह्मयज्ञो मनुष्ययज्ञ इति तद् यदग्नौ जुहोति स देवयज्ञो यद् बलिं करोति स भूतयज्ञो यत् पितभ्यों ददाति स पितृयज्ञो यत् स्वाध्यायमधीते स ब्रह्मयज्ञो यन् मनुष्येभ्यो ददाति स मनुष्ययज्ञ इत तानेतान् यज्ञनहरहः कुर्वीत** ।(आश्वलायन गृहसूत्र, तृतीय अद्याय)

हम ऊपर कह आए हैं कि पितृ का अर्थ है माता, पिता या अन्य पुरखे। सौर यज्ञ का अर्थ है सत्कार। इसलिए 'पितृयज्ञ' का अर्थ हुआ माता पिता आदि पुरखों की सेवा सुश्रूषा!

इसमें वेद का भी प्रमाण है-

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु सम्मनाः ।

अर्थात् लड़के को चाहिए कि पिता के व्रतों का अनुसरण करने वाला और माता को प्रसन्न करने वाला हो। अर्थात् सन्तान को माता पिता आदि गुरुजनों की सेवा करनी चाहिए।

अब एक प्रश्न उठता है कि पितृयज्ञ हे माता पिता का होता है या जीते हुओं का। इसमें लोगों का मतभेद है। हम कुँआर महीनों में लोगों को अपने मरे हुए पितरों का श्राद्ध तर्पण करते हुए देखते हैं, कुँआर के कृष्णपक्ष को लोग 'पितृपक्ष' कहते हैं क्योंकि इसमें मरे हुए पुरखों का श्राद्ध तर्पण किया जाता है।

हम अभी कह चुके हैं कि **'पितृ'** शब्द में कोई ऐसी बात नहीं जो मरे हुए माँ बाप की ओर संकेत करे।

अब हम यहाँ यह देखना चाहते हैं कि क्या मरा हुआ भी किसी का बाप या माँ हो सकता है।

मनुष्य नाम है विशेष शरीरधारी जीव का। न तो केवल शरीर को ही मनुष्य कहते हैं। न केवल जीव को। जब शरीर में से जीव निकल जाता है तो उसे मनुष्य नहीं कहते किन्तु **'मनुष्य की लाश'** कहते हैं। जो आज आदमी के शरीर में है वह कल मर कर चींटी के शरीर को धारण कर सकता है और परसों कुत्ता बिल्ली इत्यादि का। सम्भव है कि फिर किसी जन्म में वह मनुष्य का शरीर धारण करे।

इसी प्रकार न तो शरीर को ही माँ या बाप कहते हैं न जीव को। जब तक हमारे माता, पिता, दादी, दादा जीवित हैं तब तक वह हमारे माता, पिता, दादी या दादा हैं। जब मर गए तो उनकी लाश रह जाएगी जिसको जला देंगे। न्यादर्शन में कहा है कि- **''शरीरदाहे पातकाभावात् ।''** (न्यायदर्शन, अध्याय ३)

अर्थात् लाश के जलाने से पाप नहीं होता। जब हमारे माता पिता आदि मर जाते हैं और हम उनकी लाश को जला आते हैं तो कोई हमसे यह नहीं कहता कि तुमने पितृ-हत्या की, तुम पापी हो। क्योंकि जिस चीज़ को हमने जलाया वह माँ बाप न थे किन्तु माँ बाप की लाशें थीं।

...शेष पृ. १२ पर

हिंदू धर्म और धर्मनिरपेक्षता : वे कहाँ खड़े हैं और क्यों ?

ऐतिहासिक रूप से, धर्मनिरपेक्ष दुनिया का दृश्य यूरुओप में धार्मिक युद्धों की गर्मी में विकसित हुआ था। ये युद्ध हठधर्मी और हावी भावना के कारण थे कि ईसाई धर्म पश्चिमी संस्कृति के भीतर अधिग्रहण करने के लिए हुआ था। कहन्स्टेंटाइन का ईसाई धर्म में रूपांतरण मोड़ था। यहूदी धर्म के भीतर एक आध्यात्मिक सुधार आंदोलन पूरी तरह से एक राज्य धर्म में बदल गया और सत्ता के उपकरणों के साथ मिश्रित हो गया। ईसाई धर्म, अपने पश्चिमी मह्डलों में, इस आध्यात्मिक झटके से उबरने के लिए अभी तक है। इसके विपरीत, वैदिक विश्वास जिसे हिंदू धर्म के सांसारिक संस्करणों के साथ समान नहीं किया जाना चाहिए, जैसा कि आज देखा गया है-प्रकृति द्वारा एक बहुलवादी दृष्टि है जो आध यात्मिक मेहमानों और अभिव्यक्तियों की एक विचित्रता को समायोजित करती है। यहां जोर धार्मिक विस्तार और नुस्खे के बजाय आध्यात्मिक मूल्यों पर है। वेद पुजारी वर्ग के आधिपत्य को नहीं पहचानते हैं। पंडित और पोंटिफ्स अपनी प्रबुद्ध दृष्टि के भीतर अजीब जीव प्रतीत होंगे। वेद किसी भी जाति, पंथ या नस्ल के एकाधिकार के रूप में सत्य और न्याय को नहीं देखते हैं। यह सर्वोत्कृष्ट रूप से एक सार्वभौमिक दृष्टि है जो पूरे मानव प्रजातियों को एक परिवार के रूप में देखता है। पश्चिम में, धर्मनिरपेक्ष दुनिया के दृश्य को लोगों के साथ रहने और बहुलता के धन में आनन्दित होने में सक्षम बनाने के लिए इंजीनियर होना चाहिए। लेकिन भारत में, वैदिक संस्कृति के लिए धन्यवाद, क्षमता धार्मिक और सांस्कृतिक बहुलता के साथ रचनात्मक रूप से सामना करती है, यह समय के लिए सिंधु सभ्यता का एक अभिन्न अंग रहा है। लेकिन वैदिक विश्वास राज्य और चर्च, या धर्मनिरपेक्ष और आध्यात्मिक के बीच विभाजन को कभी स्वीकार नहीं कर सकता है। यह आध या त्मिकता के निजीकरण को नहीं बता सकता है। आध्यात्मिक ओवर-आर्किंग फ्रेम का काम है जिसके भीतर इस दुनिया में सब कुछ आगे बढ़ना है। राजनीति और धर्म के बीच विभाजन ने सार्वजनिक जीवन से सुधार और मोचन मूल्यों को निर्वासित कर दिया है और राजनीति को भ्रष्टाचार के एक क्षेत्र में बदल दिया है। यह जल्द या बाद में धर्मनिरपेक्ष तंत्र को पूर्ववत नहीं कर सकता है। आज के रूप में, 'सभी धर्मों के लिए समान सम्मान' विभिन्न प्रकार के सांप्रदायिकता के लिए असमान समर्थन के लिए व्यवहार में है। धर्मनिरपेक्ष राज्य सांप्रदायिकता के वायरस से संक्रमित हो रहा है। यह सभी सही सोच लोगों के लिए बहुत चिंता का कारण होना चाहिए। यह समय अब हमारे लिए फोकस में एक कट्टरपंथी बदलाव की दिशा में काम करने के लिए है। धर्म को हिंदू धर्म और धर्मनिरपेक्षता के बीच बैठक बिंदु होना चाहिए। राजनीतिक और आर्थिक संदर्भों में धर्म सामाजिक न्याय के लिए एक प्रतिबद्धता बन जाता है। यह सभी लोगों को जीवन की इष्टतम गुणवत्ता विकसित करने और प्राप्त करने में मदद करने के लिए आवश्यक शर्तों के निर्माण को अनिवार्य करता है। इसमें अन्याय, उत्पीड़न और शोषण की ताकतों के खिलाफ लड़ने के लिए पवित्र कर्तव्य भी शामिल है। आध यात्मिकता इस पवित्र मिशन के लिए सशक्ति करण का एकमात्र स्रोत है। यह हमारे धर्मनिरपेक्ष समाजवादी राजनीतिक तंत्र का एक अभियोग है कि पिछले ५३ वर्षों में सामाजिक न्याय को हमारे लाखों नागरिकों के लिए वास्तविकता बनाने की दिशा में बहुत कम प्रगति हुई है। यह काफी हद तक था क्योंकि हम धर्मों के जाल के साथ व्यस्त हो गए हैं। नतीजतन, हम सच्ची आध्यात्मिकता की मांगों के लिए ब्लिंग हो गए हैं। यह कुछ भी नहीं है कि राम हिंदू पैन्थियन में बहुत प्रतिष्ठित है। वह धर्म का धर्म का अवतार है। उसमें हम धर्मी शासक के स्व-सूर्यकार को धर्म की मांगों के साथ-साथ बुराई की ताकतों के साथ समझौता करने से इनकार करते हैं। इस तरह की नैतिक सक्रियता, यहां तक छ्कि निरपेक्षता,

एक धर्मनिरपेक्ष समाज के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। विशेषवाद का मतलब कभी भी लोगों के जीवन की स्थिति के मामलों से आध्यात्मिकता का निर्वासन नहीं है। इसका मतलब धर्म-आधारित संघर्षों और प्रतियोगिताओं का उन्मूलन होना चाहिए जो सामाजिक सद्भाव से शादी करते हैं और एक राष्ट्र की ऊर्जाओं को भंग कर देते हैं। यह वास्तव में मौलिक वैदिक स्थिति थी, जब तक कि यह एक तरफ बढ़ते पुजारी वर्ग के वर्ग हितों और अन्य ध र्मों के हठधर्मिता और विशिष्टता के साथ मिश्रित हो गया। यह इस कारण से था कि स्वामी दयानंद सरस्वती ने क्लेरियन कहल जारी कियाः 'वेद में वापस!'

एक स्वस्थ धर्मनिरपेक्ष समाज बनाने के लिए हमारा दृष्टिकोण आंशिक और भोला रहा है। इतिहास की भावना के अभाव ने हमें इस तथ्य के लिए अंधा कर दिया कि धर्मनिरपेक्ष समाज पश्चिमी समाजों में यथोचित रूप से अच्छी तरह से काम कर सकता है क्योंकि न्याय, समानता और जवाबदेही के मौलिक-प्रति मूल्यों को पहले से ही पोपल की संस्कृति और सामूहिक मानस में अच्छी तरह से सौंपा गया था। हालांकि सिद्धांत रूप में धर्मनिरपेक्षता ने धर्म का निजी करण करने का दावा किया है, वास्तविक अभ्यास में धर्मनिरपेक्षता के उपकरणों और संस्थानों ने ईसाई आध्यात्मिकता द्वारा बनाई गई नींव पर काम करना जारी रखा (जो कि चर्च-केंद्रित ईसाई धर्म से अलग है!)। भारतीय संदर्भ में हम एक बेहतर स्थिति में हैं, संभावित रूप से। पश्चिम के विपरीत, भारत में धार्मिक रूप से बहुलवादी विरासत है। यह उप-महाद्वीप सदियों से विभिन्न ध ार्मिक परंपराओं के लिए एक महत्वपूर्ण है। इसमें से हमारे लोगों को मजबूत करने और सशक्त बनाने के लिए एक नई आध्यात्मिक दृष्टि का उभरना चाहिए था। लेकिन यह मुख्य रूप से दो कारणों से नहीं हुआ। सबसे पहले, ध र्म स्वयं अनुष्ठानवाद, अश्लीलता और सांप्रदायिकता की बाढ़ से अवगत थे। दूसरे, पुनर्संरचना उत्परिवर्ती संघर्ष और संदेह के एक मह्डल में स्थित थी ताकि लोगों की सेवा में किसी भी रचनात्मक सहयोग में उनके प्रवेश की संभावना पूरी तरह से खारिज कर दी गई। सुइयों का कहना है, यह निहित स्वार्थों की साजिश थी और इसने हमारे देश और उसके जनता के लिए कोई भी नहीं किया है। वर्तमान समय में अपना ध्यान आकर्षित करने की आवश्यकता है कि यह सवाल नहीं है कि प्रत्येक धार्मिक परंपरा को अलग -अलग और स्वतंत्र रूप से किस हद तक धर्मनिरपेक्षता के नुस्खे से मेल खाती है। घंटे की आवश्यकता विभिन्न धार्मिक समुदायों के साथ एक साथ आने और एक साझा आध्यात्मिकता को ठीक करने के लिए है जो उपचार के लिए अनुकूल और हमारी धर्मनिरपेक्ष संस्कृति को सत्य और सामाजिक न्याय के लिए एक जुनून के साथ बदलकर बदल देती है जो धर्म का सार है।

..पृ. १० का शेष.

अब प्रश्न होता है कि मरने के बाद हमारे माँ बाप कहाँ हैं ? क्या वह जीव माँ बाप हैं ? कदापि नहीं। उन जीवों की पितृ संज्ञा नहीं। क्योंकि मरने के पश्चात् न जाने उन्होंने कहाँ जन्म लिया। वही जीव सम्भव है कि हमारे ही घरों में नाती पोतों या पुत्र के रूप में जन्म लें। या अपने कर्मानुसार ऊँच या नीच योनियों को प्राप्त हों या यदि परम योगी हों तो उनकी मुक्ति भी हो जाए। यदि हमारे माता या पिता हमारे पुत्र या पुत्री के रूप में जन्म लेंगे तो हम उनके **'पितृ'** होंगे न कि वह हमारे। वस्तुतः माता पिता आदि सम्बन्ध उसी समय तक हैं जब तक कि शरीर और जीव संयुक्त हैं ? मृत्यु होते ही यह सम्बन्ध छूट जाते हैं।

जब माता पिता मर जाते हैं तो हम कहते हैं कि हमारे माता पिता मर गए। परन्तु वह मरते नहीं। जीव तो सदा अमर है। इसीलिए मरे हुए माता पिता की पितृ संज्ञा केवल भूतकाल की अपेक्षा से होती है वर्तमान काल की अपेक्षा से नहीं। क्योंकि यह सम्बन्ध केवल भूतकाल में था अब नहीं।

इसीलिए यह कहते हैं कि हमारे पिता धनाढ्य थे, या निर्धन थे, विद्वान् थे या अविद्वान् थे। परन्तु यह कोई नहीं कहता कि आज हमारे मातापिता कुत्ता या घोड़ा हैं या हाथी हैं। क्योंकि हमारा पितृत्व का सम्बन्ध उसी दिन समाप्त हो गया जिस दिन वे मर गए। इसीलिए पितृयज्ञ केवल जीवित माता पिता का हो सकता है न कि मरे हुओं का। इसी को चाहे श्रद्धा कह लीजिए चाहे तर्पण। साधारणतया स्राद्ध का मरे हुओं के साथ जो सम्बन्ध है वह गलत है और वह एक प्रकार की कुप्रथा है। कुँआर को पितृपक्ष कहना गलत है। अगर हमारे माँ बाप या दादी दादा जीवित हैं तो हमारे लिए सौभाग्यवश समस्त वर्ष ही पितृपक्ष है क्योंकि हमको नित्य उनकी सेवा, सत्कार करना चाहिए। परन्तु यदि वह मर गए हैं तो कुँआर में ही कहां से आएंगे। इस लिए

మనిషి, సందేశం మరియు లక్ష్యం

– డాక్టర్ కపిల వాత్స్యాయన్

స్వామి దయానంద సరస్వతి జీవితం, కృషి మరియు సహకారంపై జరిగే ఈ ముఖ్యమైన సింపోజియంలో పాల్గొనమని నన్ను ఆహ్వానించడం గౌరవనీయులైన స్వామి అగ్నివేష్ గారి దయ మరియు ఉదారంగా ఉంది.

ఈ వేదికలోని ప్రముఖ వక్తలు ఇతర మతాలు మరియు విశ్వాసాలతో, ముఖ్యంగా ఇస్లాం, క్రైస్తవ మతం మరియు సిక్కు మతాలతో స్వామి దయానందుడి మేధో మరియు సామాజిక సంబంధాలపై అమూల్యమైన వెలుగును ప్రసరింపజేశారు. వారి ప్రెజెంటేషన్లకు నేను జోడించగలిగేది చాలా తక్కువ, ఇక్కడ పరిశోధించి, విచారించి, విభిన్న ఆలోచనా విధానాలలో మతపరమైన సూత్రాలు మరియు నైతిక, అభ్యాసాలలో నిజాయితీగల సంభాషణను స్థాపించడానికి ప్రయత్నించిన సత్య అన్వేషకుడు ఉన్నాడనే వాస్తవాన్ని నొక్కి చెప్పడం తప్ప. బౌద్ధమతం మరియు జైనమతంతో సహా అన్ని విశ్వాసాల సిద్ధాంతాలను ఆయన పరిశీలించారు. ఈ పోలికల ఆధారం దానికదే ఒక విస్తారమైన విషయం.

బదులుగా, 'హిందూ' అనే సాధారణ నామకరణం ద్వారా మనం అర్థం చేసుకునే ప్రతిదాని పునాదుల సారాంశానికి తిరిగి రావడానికి స్వామి దయానంద సరస్వతి నిరంతరాయంగా మరియు నిరంతరాయంగా ప్రాధాన్యత ఇవ్వడం యొక్క లోతైన ప్రభావం గురించి మరింత వ్యక్తిగత స్థాయిలో చెప్పడానికి నేను ఈ అవకాశాన్ని ఉపయోగించుకుంటాను. వేదాలను సారాంశంగా తిరిగి రావడమే కాకుండా, సారాంశాన్ని చర్య ద్వారా అనువదించడంపై ఆయన ప్రాధాన్యత తార్కికంగా ఉంది. దీనికి అతనికి సాధనాలు విద్య, మొదటి మరియు చివరివి. కఠినమైన క్రమశిక్షణ మరియు శిక్షణ కీలకం. ప్రవర్తన, నిజాయితీ, నైతిక మరియు నైతిక చర్యలు అంతిమ పరీక్ష. అందువల్ల, కపటత్వం మరియు ద్వంద్వ చర్చలు ఒక అసహ్యకరమైనవి. అతను నిర్భయంగా మరియు అవిశ్రాంతంగా బాహ్య 'సిద్ధాంతం' మరియు మతపరమైన సంకుచితత్వంలో పంజరంలో ఉన్న 'కపటత్వం' మరియు బాహ్య రూపాన్ని బహిర్గతం చేశాడు. ఏ రూపంలోనైనా కపటత్వం అనేక సామాజిక దురాచారాలకు మూలం అని నొక్కి చెప్పడంలో అతను ఎవరినీ వదిలిపెట్టలేదు.

శివలింగంపై ఎలుకలు పడిన సంఘటన తర్వాత ఇంటి నుండి బయలుదేరిన మొదటి క్షణం నుండి జోధ్‌పూర్ మహారాజును ఒప్పించే చివరి క్షణం వరకు ఆయన ప్రయాణం ఉత్సాహ భరితమైన అన్వేషకుడు మరియు సంస్కర్త. ఆయన పర్వతాలను దాటారు, బద్రీనాథ్, కేదార్‌నాథ్ మరియు తుంగనాథ్ శిఖరాలను అధిరోహించారు, జ్ఞాన భాండాగారాలుగా పరిగణించబడే వారందరితో మరియు లెక్కలేనన్ని శాఖలు మరియు ఆరాధనల సంరక్షకులుగా భావించే వారందరితో నివసించారు మరియు సంభాషించారు. ఆయన బ్రహ్మ సమాజ నాయకులు, మహర్షి దేబేంద్రనాథ్ ఠాగూర్ మరియు కేశబ్ చంద్రతో సంభాషించారు, రామకృష్ణ పరమహంసను కలిశారు, కానీ శాశ్వత మూలం వేదాలు వాటి స్వచ్ఛమైన స్వచ్ఛతలో ఉన్నాయని నొక్కి చెప్పడానికి మరియు ప్రకటించడానికి ఆయన తన వంతు కృషి చేశారు. తీవ్ర వ్యతిరేకత మరియు శత్రుత్వం ఉన్నప్పటికీ అనేక శాఖలకు చెందిన పూజారులు మరియు పండితులతో ఆయన నిర్వహించిన లెక్కలేనన్ని చర్చలు, అలుపెరుగని ధైర్యం, దృఢ నిశ్చయం మరియు లక్ష్యం పట్ల అచంచలమైన నిబద్ధతను తెలియజేస్తాయి. ఆ చర్చల వివరాలను (శాస్త్రార్థం) మళ్ళీ చదివినప్పుడు, అవగాహన, అవగాహన మరియు ఆచారాలలోని తేడాలను బహిరంగంగా చర్చించడానికి అద్భుతమైన స్థలం ఉందని మరియు 'హిందూ మతం' అని పిలువబడే ఈ విస్తృతమైన మరియు అపరిమితమైన వైవిధ్యమైన మహాసముద్రం యొక్క అభ్యాసాలను బహిరంగంగా చర్చించడానికి అద్భుతమైన స్థలం ఉందని ఒకరు ఆశ్చర్యపోతారు.

గోధుమ నుండి పొట్టును వేరు చేయడం, ప్రవర్తన మరియు చర్యకు మార్గనిర్దేశం చేసే జీవిత తత్వాన్ని పాఠ్య మూలాల నుండి సంగ్రహించడం ఆయన ఆందోళన.

ముందు ఎత్తి చూపినట్లుగా, తన కాలంలోని సమాజాన్ని సంస్కరించడానికి మరియు 'కులం' మరియు వర్ణాన్ని విడిచిపెట్టి, సంస్కరణకు మేధోపరంగా అధికారం పొందే కొత్త తరం భారతీయులను పెంపొందించడానికి విద్య మరియు శిక్షణ ప్రధాన సంస్థలు.

విద్యపై సత్యార్థ ప్రకాశ (లైట్ ఆఫ్ ట్రూత్ అని అనువదించబడింది)లోని అధ్యాయాలు నేటికీ అర్థవంతంగా ఉన్నాయి.

భారత జాతీయ రాజ్యం ఉచిత మరియు తప్పనిసరి విద్య గురించి మాట్లాడటానికి చాలా కాలం ముందు, స్వామీజీ విద్య యొక్క ప్రాధాన్యతను సమర్థించారు. అన్ని పిల్లలను (బాలికలు మరియు అబ్బాయిలు సమానంగా, మరియు తేడా లేకుండా) పాఠశాలలకు పంపాలని మరియు శారీరక, లోహ మరియు నైతిక విద్యను అందించాలని ఆయన సలహా ఇచ్చారు.

సముచితంగానే ఆయన 'పిల్లల పెంపకం' అనే అధ్యాయాన్ని శతపథ్ బ్రాహ్మణం నుండి ప్రసిద్ధ ఉల్లేఖనంతో ప్రారంభిస్తాడు, అంటే..,

"మాతృమాన్ పితృమాన్ ఆచార్యవాన్ పురుషో వేద"

('తల్లి, తండ్రి మరియు గురువు అనే ముగ్గురు మంచి గురువుల ప్రయోజనాన్ని పొందిన వ్యక్తి మాత్రమే గొప్ప పండితుడు కాగలడని ధృవీకరించండి'). .

సరైన ఉచ్చారణ, సరైన ఉచ్చారణ విషయంలో బిడ్డకు మొదటి గురువుగా ఆమె పాత్ర ఎంత ముఖ్యమో, తల్లి సంరక్షణపై స్వామీజీ ప్రాధాన్యత కూడా అంతే ముఖ్యమైనది. సంస్కృతం నేర్చుకోవడంపై ఆయన ప్రాధాన్యత ఇస్తూనే, ఇతర భాషలను నేర్చుకోవాలని కూడా ఆయన సిఫార్సు చేస్తున్నారు. పిల్లల పెంపకం మరియు విద్యకు సంబంధించిన రెండు అధ్యాయాలలో, స్వామీజీ హేతుబద్ధమైన మరియు విశాల దృక్పథంతో కూడిన విధానాన్ని అవలంబిస్తారు. ప్రజలు భౌతిక శరీరం మరియు శరీర జీవక్రియ యొక్క పనితీరును తెలుసుకోవాలని మరియు గుడ్డి మూఢనమ్మకాలు, జ్యోతిషశాస్త్రం మరియు ఇతర వాటి ద్వారా కొట్టుకుపోకూడదని ఆయన కోరుకుంటున్నారు. అదే సమయంలో వస్తున్న ఈ సలహా శారీరక ఆరోగ్యం మరియు ప్రాథమిక విద్య గురించి అజ్ఞానాన్ని నిర్మూలించడానికి ఒక తీవ్రమైన అడుగు. వారి పిల్లల విద్యను నిర్లక్ష్యం చేసే తల్లిదండ్రులు అతనికి 'నిజమైన శత్రువులు'. తల్లిదండ్రుల అత్యున్నత విధి వారి పిల్లలకు విద్యను అందించడం. జ్ఞానాన్ని సంపాదించడం మరియు సత్యం మరియు నైతిక ప్రవర్తనకు అనుగుణంగా ఉండటం విద్య యొక్క లక్ష్యాలు. ఆయన దృష్టిలో అందరూ విద్యావంతులు కావాలి, యువరాణి లేదా బిచ్చగాళ్ల లేదా తక్కువ ధనవంతుల కుమారులు మరియు కుమార్తెలు. ఆయన సమానత్వ పాఠశాల వ్యవస్థను సమర్థించారు. పొరుగు పాఠశాలలు అనే పదానికి ఇవి నవజాత ప్రారంభం.

ఈ లక్ష్యాలకు భిన్నంగా, ధనవంతులకు మరియు పేదలకు అందుబాటులో ఉన్న విద్యా అవకాశాల మధ్య విస్తృత అంతరం ఉందని మాకు తెలుసు. మా పరంగా అనువదించబడినట్లుగా, స్వామీజీ పొరుగు పాఠశాలల వ్యవస్థను స్థాపించాలని వాదిస్తున్నారు, ఇక్కడ వివిధ సామాజిక-ఆర్థిక వర్గాలకు చెందిన వారందరికీ ఒకే విద్య అందించబడుతుంది. అయ్యో, గురుకుల వ్యవస్థ మరియు డి.ఎ.వి. పాఠశాలల విజయం ఉన్నప్పటికీ, ప్రభుత్వ మరియు ప్రైవేట్ రంగాలలో ఉన్నత పాఠశాలలు అని పిలవబడే వాటికి మరియు ఇతరులకు మధ్య విస్తృత వ్యత్యాసం ఉంది. 'ధనిక మరియు పేద అనే తేడా లేకుండా అందరినీ సమానంగా చూడాలి' అని స్వామీజీ పదే పదే పునరుద్ఘాటించారు. స్వాతంత్ర్యం వచ్చి ఆరు దశాబ్దాలు గడిచినా మనం ఈ 'లక్ష్యం' సాధించలేకపోతున్నాము.

స్వామీజీ విద్య యొక్క విషయాన్ని మరింత విశదీకరిస్తూ, బోధన మరియు అభ్యాసం యొక్క కంటెంట్, పాఠ్యాంశాలు మరియు బోధనా విధానం గురించి కొంత వివరంగా చెబుతారు. ఆయన ఈ వ్యవస్థను చాలా స్పష్టంగా వివరిస్తారు. విద్య శారీరక మరియు మానసిక సామర్థ్యాలను అభివృద్ధి చేయాలనే వాస్తవాన్ని ఆయన నొక్కి చెప్పారు. వేదాల యొక్క ముఖ్యమైన సారాంశం ఆధారంగా నైతిక విలువలను స్వీకరించడం చాలా ముఖ్యమైనది.

చివరికి, తన లక్షణ శైలిలో, సమాజంలోని ఏ వర్గం అయినా జ్ఞానాన్ని పొందకుండా నిరోధించాలనుకునే వారందరికీ ఆయన హితవు పలుకుతాడు. ఆయన నిస్సందేహంగా ఇలా అంటాడు: అందరు పురుషులు మరియు స్త్రీలు, అంటే మొత్తం మానవాళికి, క్షత్రియులు, శూద్రులు, స్త్రీలు, సేవకులు, అత్యల్ప స్థాయి వారు వేదాలను నేర్చుకోవచ్చు మరియు బోధించవచ్చు అనే విషయాన్ని తక్కువ అంచనా వేయడానికి ఆయన వేదాలను, ముఖ్యంగా యజుర్వేదాన్ని ఎంతో నమ్మకంగా ఆకర్షిస్తాడు.

'కాబట్టి అందరూ జ్ఞానాన్ని సంపాదించుకోవాలి, ధర్మాన్ని ఆచరించాలి, దుర్గుణాలను త్యజించాలి...'

జ్ఞానం అనేది సమాజంలోని ఏ ప్రత్యేక వర్గానికైనా, లింగానికీ ఉన్న ప్రత్యేక హక్కు కాదు.

ఆయన తన వాదనను దాని తార్కిక ముగింపుకు తీసుకువెళతాడు. ఒక ప్రశ్నకు సమాధానంగా, ఆయన ఇలా జవాబిస్తాడు, జ్ఞానం అందరికీ ఉద్దేశించబడకపోతే, దేవుడు వారి (శూద్రులు మరియు స్త్రీలు) శరీరాలలో వాక్కు మరియు శ్రవణ అవయవాలను ఎందుకు సృష్టించాడు? సంక్షిప్తంగా, స్వామీజీ వేదాలను అర్థం చేసుకుంటున్నారు, కానీ 'వర్ణం, కులం లేదా లింగం ఆధారంగా వివక్ష చూపకూడదని' కూడా గట్టిగా సమర్థిస్తున్నారు.

శరీరం మరియు మనస్సు యొక్క చక్కటి విద్యను అందించడానికి, మహిళలు/బాలికలకు మంచి శారీరక విద్యను అందించాలని ఆయన సిఫార్స్ చేస్తున్నారు. శారీరక వ్యాయామం మరియు రక్షణ మరియు దాడి నైపుణ్యాలు (గతకం)తో పాటు, మహిళలు అకౌంటింగ్ మరియు వాణిజ్య నైపుణ్యాలు మరియు ప్రాథమిక వైద్యం యొక్క జ్ఞానాన్ని పొందాలని స్వామిజీ అభిప్రాయపడ్డారు. అంతే కాకుండా, గణితం మరియు కళలు రెండింటికీ సమాన ప్రాధాన్యత ఇవ్వాలి. వాస్తవానికి, వ్యవస్థ నైతిక మరియు నైతిక విలువలను పెంపొందించాలి. అతనికి 'జ్ఞానం మాత్రమే తరగని నిధి, మీరు దానిని ఎంత ఖర్చు చేస్తే అంత పెరుగుతుంది'. విద్య మాత్రమే వ్యక్తిని మారుస్తుంది మరియు సమాజాన్ని సంస్కరిస్తుంది.

సత్యార్థ ప్రకాశంలోని ఈ ప్రకటనలు గురుకుల వ్యవస్థ మరియు డి.ఎ.వి. పాఠశాల వ్యవస్థకు ప్రేరణగా నిలిచాయి. స్వామి శ్రద్ధానంద స్థాపించిన మొదటి పాఠశాల ఒక రకమైన నిలువు విద్యను అందించగా, ముఖ్యంగా గురుకుల కాంగ్రి, డి.ఎ.వి. పాఠశాల వ్యవస్థ విస్తృత ఆధారితమైనది, అన్ని కులాలు మరియు తరగతులకు తెరిచి ఉంది మరియు భారతీయ సంప్రదాయం యొక్క జ్ఞాన వ్యవస్థకు సమాన ప్రాధాన్యతనిచ్చింది, అలాగే ఆంగ్ల భాష మరియు ఆధునిక అంశాలపై పరిచయం మరియు నియంత్రణను కూడా ఇచ్చింది. సమతుల్యతను సాధించడానికి ప్రయత్నించారు. స్వామీజీ ఆదర్శాల నుండి ప్రేరణ పొందిన విద్యా వ్యవస్థలు మరియు ఆయన ప్రారంభించిన సంస్థ, ఆర్య సమాజ్, భారతీయ సమాజాన్ని సంస్కరించడంలో ముఖ్యమైన పాత్ర పోషించాయి. చాలా మంది సంకుచిత మతవాదం యొక్క సంకెళ్ల నుండి విడిపోయారు, అలాగే భౌతిక జీవితంలోని సమస్యలను పరిష్కరించడానికి బుద్ధిహీనమైన ఆచారాలపై గుడ్డి మూఢనమ్మకాలు మరియు నమ్మకం కూడా ఉన్నాయి.

ముఖ్యంగా ఉత్తర భారతదేశంలో ఈ సందేశం వ్యాప్తి చెందడం మరియు సంస్థల స్థాపన వేగంగా జరిగింది, దాదాపుగా ఉత్కంఠభరితంగా జరిగింది. సుదూర కాశ్మీర్ మరియు పంజాబ్ అంతటా రాత్రికి రాత్రే బాలికల కోసం పర్దా లేని పాఠశాలలు ఆవిర్భవించాయి. కులం, సామాజిక స్థితి ఆధారంగా ఎటువంటి వివక్షత లేదు. నిజానికి, ఆర్య సమాజ్ అనుచరులు చాలా మంది తమ 'కుల' అనుబంధాన్ని బహిర్గతం చేయకుండా ఉండటానికి వారి ఇంటిపేర్లను ఉపయోగించడం మానేశారు. 'కుమార్' మొదలైన సాధారణ ముగింపులను ఉపయోగించడం ప్రారంభించారు. నేడు 'కులం' మరియు మతపరమైన సెక్టారియన్ అనుబంధాలు మన రాజకీయ వ్యవస్థల లోపలికి ప్రవేశిస్తున్నప్పుడు మనం ఈ ఉద్యమాన్ని తిరిగి అంచనా వేయాలి.

జననం లేదా కులం ఆధారంగా ఉత్పాదకత లేని సామాజిక సోపానక్రమాన్ని తిరిగి స్థాపించడంలో పెరుగుదల ఉందా? ఇది ఖచ్చితంగా సామాజిక నిర్మాణాన్ని బలహీనపరిచింది మరియు ప్రజాస్వామ్య పాలనా వ్యవస్థ యొక్క సమర్థవంతమైన పనితీరుపై ప్రతికూల ప్రభావాన్ని చూపింది? లింగం అనేది అర్థం చేసుకోదగినంతగా చర్చించబడిన, చర్చించబడిన సమస్య, ఇది బాధ మరియు అశాంతికి కూడా కారణం. స్వామీజీ బాలికలకు విద్యను అందించాలని, సమాన అవకాశాలు కల్పించాలని కోరుకోవడమే కాకుండా, బాల్య వివాహాలను ఖండించడంలో మరింత ముందుకు వెళ్లారు, సరిగ్గా అలాగే చేశారు. వితంతు పునర్వివాహం నిషేధాన్ని కూడా ఆయన సవాలు చేశారు. సంక్షిప్తంగా, స్త్రీలకు పురుషులతో సమాన హక్కులు, అధికారాలు ఉండాలని ఆయన కోరుకున్నారు.

ఆ విధంగా స్వామీజీ బలగాలకు తీసుకువచ్చిన మరియు పోరాడిన సమస్యలు, ఆయన మరణించిన శతాబ్దం మరియు త్రైమాసికంలో అనేక మార్పులు జరిగినప్పటికీ, ఇప్పటికీ మనతోనే ఉన్నాయి. ప్రజాస్వామ్యంలో ఓట్లను సమీకరించడానికి ప్రాతిపదికగా 'కులం' దాని ప్రతికూల అవతారంలో ప్రాథమిక మరియు ప్రాథమిక స్థాయి ఉచిత మరియు నిర్బంధ విద్య లక్ష్యాన్ని సాధించడానికి మనం ఎక్కడా దగ్గరగా లేము మరియు లింగ అసమానతలు మునుపటి కంటే వికారమైన రూపాల్లో మన ముందు ఉన్నాయి. మనం మళ్ళీ సమతుల్యత మరియు ఆరోగ్యాన్ని పునరుద్ధరించగలమా? భారతదేశంలోని మేధావులు, ఆధ్యాత్మిక నాయకులు సామాజిక సంస్కర్తలు, వారి ఆలోచనలు మరియు చర్యలు అనుగుణంగా ఉన్నాయి. ఇతరుల సూత్రాలు మరియు విలువలతో చర్చ మరియు చర్చకు తెరిచినంత లోతుగా పాతుకుపోయిన, విస్తృతంగా 'సమ్మిళితమైన' మరియు దాని ప్రాథమిక ప్రధాన విలువలలో దృఢంగా ఉండే భారతదేశాన్ని రూపొందించడానికి మనం వారిని అనుకరించగలమా?

స్వామి దయానంద్ యొక్క ఆధ్యాత్మిక ప్రతిభ

- రెవరెండ్ వల్సన్ తంపు

మహర్షి దయానంద్ యొక్క గౌరవప్రదమైన జ్ఞాపకాలను పునరుద్ధరించడానికి మరియు ఆర్య సమాజ ఉద్యమాన్ని పునరుద్ధరించడానికి ఉద్దేశించిన ఈ సమావేశంలో ప్రసంగించడానికి నన్ను పిలవడం నాకు గౌరవంగా అనిపిస్తుంది. ఈ సందర్భంగా నేను ఒక గొప్ప నమ్మకంతో పాటు లోతైన ఆందోళనను కూడా పంచుకుంటాను.

మొదటిది, నమ్మకం. మహర్షి దయానంద్‌లో మనకు అరుదైన ఆధ్యాత్మిక మేధావి ఉన్నారని నేను నమ్ముతున్నాను, ఆయన దృష్టి మరియు లక్ష్యం భారతీయ సంబంధంలో అపూర్వమైన ఆధ్యాత్మిక కదలికను ప్రతిబింబిస్తాయి. ఈ ఉద్యమం యొక్క ఆధ్యాత్మిక సారాన్ని పునరుద్ధరించడం ఆర్య సమాజం పట్ల శ్రద్ధ వహించే వారికి అత్యవసరమని నేను అంతే నమ్ముతున్నాను. ఆర్య సమాజం, దాని ప్రామాణిక వెర్షన్‌లో, మతతత్వం, కులతత్వం మరియు మతపరమైన అస్పష్టత రూపంలో మన చుట్టూ మనం చూస్తున్న ఆధ్యాత్మిక క్షీణత మరియు దిశానిర్దేశం లేకపోవడానికి ప్రభావవంతమైన విరుగుడు, ఇవన్నీ భారతదేశం యొక్క ముఖాన్ని నల్లగా చేస్తాయి మరియు ఆమె నిజమైన గొప్పతనాన్ని ఊపిరి ఆడకుండా చేస్తాయి.

రెండవది, ఆందోళన. ఈ కంటెంట్‌లో నా ఆందోళన పైన చెప్పినట్లుగా నా నమ్మకం నుండి పుట్టింది. విచారకరంగా, గత శతాబ్దంలో ఆర్య సమాజం దాని ఆధ్యాత్మిక బావుల నుండి దూరంగా వెళ్ళిపోయింది. అది దాని ప్రత్యేకతను వృధా చేసి, దాని లక్ష్యాన్ని కోల్పోయినట్లు అనిపిస్తుంది. ఈ ప్రత్యేకమైన ఉద్యమం భారతదేశ ఆధ్యాత్మిక భౌగోళికం నుండి పారిపోయి నిర్మూలించడానికి ఉద్దేశించిన శక్తులచే అధిగమించబడినట్లు కనిపిస్తుంది. ఈ విషయంలో కేవలం మూడు అంశాలను మాత్రమే పరిశీలిద్దాం. ఈ ఉద్యమం యొక్క ప్రధాన ఆధ్యాత్మిక ఎజెండా-అంటే, భారతీయ సమాజాన్ని కులం మరియు మూఢనమ్మకాల నుండి విముక్తి చేయడం మరియు దాని గొప్పతనాన్ని పెంచడం- దాదాపుగా మరచిపోయింది. మన సమాజంలో అది మేల్కొల్పిన మేధో మరియు సాంస్కృతిక శక్తి ఇకపై ఉద్యమం యొక్క బలమైన శక్తిగా లేదు. నేను కలిసిన అనేక మంది ప్రముఖ హిందూ నాయకులు మరియు ఆలోచనాపరులు, విచారకరంగా, మాజీ ఆర్య సమాజీలు. భారతీయ మతతత్వం యొక్క స్తబ్దుగా ఉన్న కొలనులో మేధో మరియు ఆధ్యాత్మిక ఉద్ధృతిని ఉత్ప్రేరక పరచడం ద్వారా సమాజం గతంలో మన దేశానికి గొప్ప సేవ చేసింది. ఇందులో ఒక అద్భుతం ఇప్పటికీ అలాగే ఉంది.

మూడవది మొదటి రెండింటి కంటే చాలా ముఖ్యమైనది, మరియు రెండింటికీ మూలం కావచ్చు. మరియు అది ప్రస్తుత కాలంలో ఆర్య సమాజ ఉద్యమాన్ని బానిసలుగా చేసినట్లు కనిపించే గుర్తించదగిన పలాయనవాద లక్షణం. ఈ పరిస్థితిని సరైన దృక్పథంలో చూడటానికి, కేవలం మతతత్వానికి మరియు నిజమైన ఆధ్యాత్మికతకు మధ్య వ్యత్యాసాన్ని మనం లెక్కించాలి. మతతత్వం, అన్ని సమయాల్లో, పలాయనవాదానికి గురవుతుంది. ఇది సాధారణంగా, దేవుని అనుగ్రహాన్ని పెంచడం మరియు దైవిక అసంతృప్తిని తగ్గించడం అనే రెండు ఉద్దేశ్యంతో దేవునిని బాగా హాస్యాస్పదంగా ఉంచడానికి ఆసక్తిగా ఉన్న పవిత్రమైన స్వార్థం ద్వారా నడపబడుతుంది. అటువంటి మతతత్వం తప్పనిసరిగా కిరాయి మరియు లావాదేవీలు, లాభం మరియు నష్టాల గణనల ద్వారా నడపబడుతుంది. సమాజంలో ఆధ్యాత్మిక విలువలు ప్రబలంగా ఉండేలా చేయడానికి వాస్తవాల ప్రపంచాన్ని నిమగ్నం చేయాలనే ఆత్రుతతో ఇది గుర్తించబడదు. ఆధ్యాత్మికత దీనికి ఖచ్చితమైన వ్యతిరేకం. ఇది వ్యక్తిగత లేదా స్వార్థ ప్రయోజనాల కంటే ఉన్నతమైన దాని ద్వారా రూపొందించబడిన ఇచ్చిన సందర్భం యొక్క వాస్తవాలతో నిమగ్నమవ్వడం. అందుకే ప్రేమ, కరుణ, సత్యం మరియు న్యాయం వంటి సార్వత్రిక విలువలు ఆధ్యాత్మికతకు ప్రాథమికమైనవి, అయితే కేవలం మతపరమైన సందర్భంలో, మనం వారికి పెదవి విప్పవచ్చు.

ఈ దేశం సృష్టించిన అనేక మత నాయకులలో స్వామి దయానంద్ ఒకరు అయితే, ఆయన సంస్కర్త మరియు

సామాజిక కార్యకర్త కాదు. నిస్సందేహంగా, ఆయన నిరూపించబడిన ఆధ్యాత్మిక దిగ్గజం కాదు. దయానంద్‌ను ఆధ్యాత్మిక మేధావిగా నేను ఎందుకు పరిగణిస్తాను ? అన్నింటిలో మొదటిది, ఆయన మతంలో హేతుబద్ధత యొక్క విజయాన్ని సూచించాడు. ప్రజాదరణ పొందిన ఊహకు విరుద్ధంగా, హేతువు నిజమైన మతం యొక్క వెలుగు. ఆధ్యాత్మికంగా నిరక్షరాస్యులు మాత్రమే హేతువు మరియు విశ్వాసాన్ని వ్యతిరేకత లుగా చూస్తారు. బదులుగా, అవి ఆధ్యాత్మికత యొక్క రథాన్ని లాగుతున్న రెండు గుర్రాలు. విశ్వాసం ద్యోతక రంగానికి చెందిన సత్యాలు మరియు అంతర్దృష్టులను అంతర్లీనంగా పొందుతుంది మరియు ప్రాప్తి చేస్తుంది. కానీ ద్యోతక పంటను హేతువు కడుపులో జీర్ణించుకోవాలి. హేతుబద్ధం కాని దానికి మతం యొక్క సంగ్రహాల యంలో స్థానం ఉండకూడదు. దీనిని పట్టుబట్టకపోతే, మతం త్వరగా అంధ విశ్వాసం, మూఢనమ్మకం మరియు అస్పష్టతలోకి తిరిగి వెళుతుంది.

తమ మతాలను తీవ్రంగా పరిగణించే వారందరికీ మహర్షి దయానందుడు ఒక ఆదర్శప్రాయుడు. దయానందుడికి ముందు రాత్రి విగ్రహాలకు అర్పించిన ఆహారాన్ని ఎలుకలు తినడం ఎంతమంది యువకులు చూసి ఉండవచ్చు ! వారిలో ఒకరికి దాని తార్కిక ముగింపు వరకు చదవడానికి మరియు దాని అర్థాన్ని అనుసరించడానికి ధైర్యం లేదా ఆత్మ స్వేచ్ఛ ఎందుకు వచ్చింది? చాలా మటుకు, వారు తమ సనాతన మతపరమైన పరిస్థితుల ద్వారా అంధులయ్యారు మరియు హేతుబద్ధంగా ఆలోచించలేక పోయారు. దయానందుడికి చేసినట్లుగానే, ఆధ్యాత్మికత మనకు ధైర్యాన్ని ఇస్తుంది, అంధ విశ్వాసం యొక్క జైలు నుండి బయటపడటానికి మరియు అంతర్గత స్వేచ్ఛ యొక్క రహస్యమైన తార్కికం మరియు విశ్లేషణ కోసం దేవుడు ఇచ్చిన సామర్థ్యాన్ని ఉపయోగించుకోవడానికి. ఈ ఆధ్యాత్మిక విధి పూర్తిగా నిర్వర్తించబడకపోతే, మతాన్ని విముక్తి మరియు సాధికారత యొక్క ఏజెంట్‌గా కాకుండా దోపిడీ సాధనంగా మార్చడంలో మనం ఒక పార్టీ అవుతాము.

రెండవది, ప్రతి నిజమైన ఆధ్యాత్మిక నాయకుడు కూడా మత సంస్కర్త. మత రంగంలో రెండు రకాల నాయకులు ఉంటారు. మత నాయకులను మనం ఎక్కువగా సనాతన ధర్మం మరియు యథాతథ స్థితి యొక్క సంరక్షకులుగా తెలుసుకుంటాము. వారి ఎజెండా ఏమిటంటే, వారు ఏదో ఒక విధంగా లేదా మరొక విధంగా ప్రయోజనం పొందే ప్రస్తుత అధికార నిర్మాణాలకు మద్దతు ఇవ్వడం మరియు చట్టబద్ధం చేయడం. వారికి హేతుబద్ధమైన ఆలోచనకు పెద్దగా ఉపయోగం ఉండదు మరియు తరచుగా సత్యం, న్యాయం మరియు కరుణ వంటి విలువల పట్ల ఉదాసీనంగా ఉంటారు. వారు మతం యొక్క యంత్రాంగాన్ని రక్షించడానికి, సంరక్షించడానికి మరియు కీర్తించడానికి చాలా ఆసక్తిగా ఉంటారు, వారు మతం యొక్క అర్థానికి అంధులు అవుతారు. వారు మత స్థాపనను దేవుడిగా తప్పుగా భావిస్తారు. దయతో, మరొక రకమైన నాయకత్వం ఉంది, ఇది కూడా మొదటిదాని కంటే చాలా అరుదు. వారికి, మతం అనేది దేవుడిని తెలుసుకోవటానికి మరియు గౌరవించడానికి పిలుపు. వారు దేవుడిని విలువలుగా అనుభవిస్తారు: సార్వత్రిక సోదరభావం, సత్యం, ప్రేమ, కరుణ మరియు న్యాయం వంటి విలువలు. భౌతిక లాభాల కోసం దేవుడిని పాలు ఆవుగా మార్చడం కాదు, వ్యక్తిగత మరియు సామాజిక స్థాయిలో మన మానవత్వంలోని ఉత్తమతను జరుపుకోవడానికి ఆహ్వానంగా దేవుడిని ఉన్నతీకరించడం వారి ప్రధాన ఎజెండా. ఇది వారి మత సంప్రదాయం యొక్క ఆధ్యాత్మిక మూలంలో క్రమంగా క్షయం గురించి వారిని ప్రత్యేకంగా ఆందోళనకు గురి చేస్తుంది, ఇది ప్రతి మతంలో జరుగుతుంది. చరిత్ర గుండా దాని ప్రయాణంలో, ప్రతి మతం దాని ఆధ్యాత్మిక మూలం నుండి క్రమంగా దూరం అవుతుంది. కాలక్రమేణా, ఒక మతం దాని ఆధ్యాత్మికతకు విరుద్ధంగా మారుతుంది. వైదిక దృష్టికి మరియు ప్రసిద్ధ హిందూ మతానికి మధ్య ఉన్న అంతరాన్ని చూసి మహర్షి దయానందుడు ప్రత్యేకంగా దిగ్భ్రాంతి చెందాడు. కాబట్టి అతను 'వేదాలకు తిరిగి వెళ్ళు' అనే ఆధ్యాత్మిక యుద్ధ నినాదంతో సన్నివేశానికి వచ్చాడు. అతను వేరే ఏమీ చేయకపోయినా, ఈ చొరవ ద్వారా నిజమైన ఆధ్యాత్మిక లక్ష్యం ఉన్న వ్యక్తిగా అతని అర్హతలను స్థాపించేది.

మత సంస్కరణ పట్ల ప్రవృత్తికి రెండు విరుద్ధమైన వ్యక్తీకరణలు ఉన్నాయి. మనం ఆధ్యాత్మిక వ్యక్తీకరణను దాని మతపరమైన ప్రతిరూపం నుండి వేరు చేయాలి. ఆధ్యాత్మిక నాయకుడు తన స్వంత మత సంప్రదాయాన్ని సంస్కరించడానికి మరియు పునరుజ్జీవింపజేయడానికి ఆసక్తి కలిగి ఉండగా, అతని మతపరమైన ప్రతిరూపం

ఇతర అన్ని మతాలను దూషించడానికి మరియు సంస్కరించడానికి ఆసక్తి కలిగి ఉంటుంది. ఇతర మతాలన్నింటినీ తక్కువ చేసి, వాటి అనుచరులను కళంకం చేయడం ద్వారా, అతను తన స్వంత మతానికి గొప్ప సేవ చేస్తాడనే అపోహతో అతను నడపబడు తున్నాడు. అయితే, ఒక ఆధ్యాత్మిక నాయకుడు ఇతర మతాలలో కుళ్ళిపోయిన వాటిని చూడకుండా ఉండవలసిన అవసరం లేదు, దయానంద మహర్షిలా కాదు. కానీ అతని ప్రధాన ఆందోళన ఏమిటంటే, మొదటగా, దయానంద్ తీవ్రమైన ఉద్దేశ్య భావనతో తన స్వంత మతాన్ని సంస్కరించు కోవడం.

ఈ సమయంలో దయానంద్ ఆధ్యాత్మిక లక్ష్యం యొక్క ప్రాముఖ్యతను అర్థం చేసుకోవడానికి కీలకమైన ఒక తేడాను మనం గుర్తించాలి. ఆధ్యాత్మిక ప్రపంచానికి ఆయన చేసిన గొప్ప సహకారం సంస్కరించ బడిన హిందూ మతం కాదు. మతం యొక్క ఆలోచనను సంస్కరించడానికి ఆయన ఒక స్పష్టమైన పిలుపు అని అది సూచిస్తుంది. ఇతర మతాల పట్ల ఆయనకున్న వ్యతిరేకత కాదు, ఇదే దయానంద్ వాటన్నింటినీ విమర్శించేలా చేసింది. ఆదర్శవంతమైన దృక్కోణం నుండి, అన్ని మతాలు వాటి ఆధ్యాత్మిక నియమాలు మరియు లక్ష్యాలకు దూరంగా ఉంటాయి. కాబట్టి ప్రతి మతం లోని విశ్వాసులు తమ మతాన్ని అర్థం చేసుకునే మరియు ఆచరించే విధానం గురించి విమర్శనాత్మకంగా అప్రమత్తంగా ఉండాల్సిన అవసరం ఉంది. స్వీయ విమర్శకు ఈ సామర్థ్యం ఒక మతం యొక్క ఆరోగ్యం మరియు దృఢత్వాన్ని రుజువు చేస్తుంది.

మరోవైపు, బాధ్యతాయుతమైన విమర్శ పట్ల అసహనం ఆ మతంలోకి ప్రవేశించిన క్షీణతకు సూచిక. దయానంద్ అభివృద్ధి చెందిన ఆధ్యాత్మిక క్రమశిక్షణ- సందేహించడం, చర్చించడం మరియు అవసరమైతే, భిన్నాభిప్రాయం-సార్వత్రిక ఆమోదానికి అర్హమైనది. నియమం ప్రకారం, మతపరమైన అంశాలు స్వీయ విమర్శకు అసమర్థమైనవి మరియు ఖచ్చితంగా ఆ కారణంగా, ఇతరులను విమర్శించడంలో సంతోషంగా ఉంటాయి. అయితే, ఆధ్యాత్మిక దృక్కోణం నుండి, స్వీయ విమర్శ చేసుకునే సామర్థ్యం అనేది ఇతర మతాలను కూడా విమర్శించడానికి ఒక వ్యక్తికి ఉన్న అధికారాన్ని కలిగి ఉంటుంది. "ముందుగా మీ స్వంత కంటిలోని దూలాన్ని తొలగించండి," అని యేసు చెప్పాడు, "అప్పుడు మీరు మీ సోదరుడి కంటిలోని నలుసును స్పష్టంగా చూస్తారు". ఆధ్యాత్మికత ఇతరులను తీర్పు తీర్చకుండా ఉండదు, కానీ తీర్పులు సత్యం ఆధారంగా ఉండేలా చూసుకుంటుంది మరియు పక్షపాతం, అజ్ఞానం మరియు దురభి ప్రాయం ఆధారంగా కాదు.

నిజమైన మత నాయకుడి ఆధ్యాత్మికత యొక్క మూడవ అంశం ఏమిటంటే, సమాజంలోని బాధితులను విముక్తి చేయడానికి మరియు శక్తివంతం చేయడానికి ఆసక్తి. దయానంద్‌కు, ఆధ్యాత్మికత మానవ విముక్తి యొక్క ఎజెండా. మరియు ఈ విషయంలోనే అతను కులంతో నిండిన హిందూ మతం విచారకరంగా కోరుతున్నట్లు భావించాడు. అతనికి విగ్రహారాధన మరియు కులతత్వం మధ్య ఒక సహజ సంబంధం ఉంది, దీనిని మనం ప్రస్తుతం పరిశీలిస్తాము.

దయానంద్ యొక్క ఆధ్యాత్మిక లక్ష్యం దేవుని బిడ్డగా ప్రతి మానవుడి సాటిలేని విలువ గురించి ఒక ప్రత్యేకమైన నమ్మకం ద్వారా ప్రేరణ పొందింది. కుల అణచివేత, సతి మరియు హిందూ పక్షాల పేదరికంపై అతని నీతిమంతమైన కోపాన్ని రేకెత్తించింది ఇదే. లక్షలాది మందిని వారి పుట్టుక ఆధారంగా ఖండించిన కులం, వైదిక విశ్వాసంపై అత్యంత చీకటి మచ్చ అని అతను ఒక సమయంలో గ్రహించాడు. అతనికి, అందరు మానవులూ పుట్టుకతోనే సమానమే. ప్రతి ఒక్కరూ శూద్రుడిగా జన్మించారు మరియు ఆధ్యాత్మికంగా అభివృద్ధి చెందుతున్న ఈ స్థితి నుండి బయటపడటం ప్రతి మానవుడి హక్కు మరియు విధి. శూద్రులుగా జన్మించి నప్పటికీ, మనలో ఎవరూ శూద్ర స్థితిలో ఉండవలసిన అవసరం లేదుబీ మనం గొప్పతనం వైపు పరిణామం చెందాలి. మతం యొక్క పని ఏమిటంటే, ప్రజలు వారి శూద్ర స్థితి నుండి వారి ఆర్య (లేదా గొప్ప) విధికి తీర్థయాత్రలో సహాయం చేయడం. ఇది ఆధ్యాత్మికత యొక్క గాథ మరియు ఈ ప్రాథమిక మానవ అవసరాన్ని లేదా ఆధ్యాత్మిక దాహాన్ని తప్పించుకునే లేదా తిరస్కరించే ఏదీ మత రంగంలో సహించకూడదు.

విగ్రహారాధన మరియు కులతత్వం మధ్య ఒక ఆధ్యాత్మిక సంబంధాన్ని దయానందుడు స్థాపించాడు. పదార్థానికి పూర్తి అస్తిత్వ స్వయంప్రతిపత్తి మరియు వాస్తవికతను మంజూర్రు చేస్తూనే, దేవుడు పదార్థంలో మూర్తీభవించలేదని లేదా దాని

పరిమితులకే పరిమితం కాలేదని ఆయన తీవ్రంగా నొక్కి చెప్పాడు. ఈ వాదనకు సామాజిక పొడిగింపును అందించాలను కుంటున్నాను. విగ్రహారాధన సమస్య ఏమిటంటే, నేను 'నిర్బంధ భ్రాంతి' అని పిలుస్తాను. ఇది దేవుని ఉనికి ప్రార్థనా స్థలం యొక్క అభయారణ్యం లేదా ప్రాంగణానికి పరిమితం చేయబడిందనే భ్రమను సృష్టిస్తుంది. విచిత్రంగా, దీనికి మరియు సృష్టికర్త అయిన దేవుడు అంతగా పరిమితం కాలేదనే కీలకమైన ఆధ్యాత్మిక అంతర్దృష్టికి మధ్య ఉన్న స్పష్టమైన వైరుధ్యాన్ని చాలా మంది గ్రహించరు. ఆయన సర్వవ్యాపి మరియు సర్వజ్ఞుడు. ఆయన బోర్డ్ రూమ్, బెడ్ రూమ్ మరియు ప్రసూతి గదిలో మానవులను ఒకే విధంగా ఎదుర్కొంటాడు. విగ్రహారాధనకు మద్దతుగా ముందుకు వచ్చిన ఆచరణాత్మక వాదనలు కాకుండా, విగ్రహారాధన యొక్క నికర ఫలితం ఒక విభజించబడిన ప్రపంచ దృక్పథం మరియు సామాజిక క్రమం. దేవుడు మరియు అన్ని సానుకూల విలువలు ప్రార్థనా స్థలాలకే పరిమితం చేయబడ్డాయి మరియు సమాజం మనిషిచే క్లెయిమ్ చేయబడింది మరియు నైతిక అడవిగా మార్చబడింది. అయితే, దేవుడిని సమాజం నుండి మినహాయించి, భూమిని మన స్వేచ్ఛా స్థలంగా చెప్పుకోవడానికి మనం దేవాలయాలు, మసీదులు మరియు చర్చిలను నిర్మించడానికి సంతోషంగా ఉన్నట్లు అనిపిస్తుంది. విగ్రహారాధన మరియు స్థానిక సామాజిక అన్యాయాల మధ్య సంబంధం ఇదే.

మానవ స్వభావం మరియు విధి గురించి మనకు అత్యంత గొప్ప భావనలు మరియు ఆదర్శాలు ఉన్నాయి, కానీ మన ట్రాక్ రికార్డ్ దానికి నిరూపించడానికి ఏమీ లేదు. మన సమాజంలో మహిళల-ముఖ్యంగా వితంతువుల-దుస్థితిని ఒక్క ఉదాహరణగా తీసుకోండి. దాని సర్వదేవత మరియు గ్రంథాలలో, హిందూ మతం మహిళలను ఆదర్శంగా తీసుకుంటుంది, కానీ మహిళల సామాజిక దుస్థితి పూర్తిగా భిన్నమైనది. ఆశ్చర్యకరంగా, స్వామి దయానంద్ బాలికలకు విద్యను అందించాల్సిన మరియు వితంతువులు తిరిగి వివాహం చేసుకోవడానికి అనుమతించాల్సిన అవసరాన్ని నొక్కి చెప్పారు.

మహర్షి దయానంద్ ప్రారంభించిన సామాజిక విముక్తి యొక్క కీలకమైన ఆధ్యాత్మిక ఎజెండా పక్కకు పడిపోయింది అనేది చాలా విచారకరం. తరువాతి దశాబ్దాలలో ఆయన అనుచరులు ఈ లక్ష్యానికి నిజాయితీగా మరియు నమ్మకంగా ఉండి ఉంటే, మనం నేడు భిన్నమైన మరియు గొప్ప సమాజంలో జీవిస్తూ ఉండేవాళ్ళం. మన జాతీయత యొక్క గత ఆరు దశాబ్దాలలో, కులం, మతతత్వం మరియు మహిళలపై అణచివేత వంటి దుష్టత్వాలు పరిమాణాత్మకంగా మాత్రమే పెరిగాయి. ఆశ్చర్యకరంగా, ఆర్య సమాజ్- స్వామి అగ్నివేష్ వంటి అరుదైన మినహాయింపులు తప్ప-ఈ అవినీతి నృత్యరూపకాన్ని చూస్తూ ఊరుకుంటారు. కొన్నిసార్లు, దాని మతపరమైన అంచు అస్పష్టత మరియు అసహన మౌలికవాద ఏజెంట్లకు సహాయం చేస్తుంది మరియు ప్రోత్సహిస్తుంది. ఆర్య సమాజ్ ఇకపై భారతీయ సందర్భంతో విముక్తి మరియు పరివర్తనాత్మక సంబంధంలో లేదని ఒకరు అభిప్రాయపడతారు. ఆర్య సమాజ్ ఇప్పుడు ఒక ఉద్యమంగా ఉందా లేదా అన్ని ఆచరణాత్మక ప్రయోజనాల కోసం, అది ఒక స్మారక చిహ్నంగా మారిందా అని ఆలోచించాల్సిన సమయం ఆసన్నమైంది. స్మారక చిహ్నం, యాదృచ్ఛికంగా, ఒక ఉద్యమం మరణాన్ని సూచిస్తుంది. ఇది, ఉత్తమంగా, ఒక ఉద్యమాన్ని సూచించే మమ్మీ చేయబడిన వేలు!

ఎటువంటి సందేహం లేకుండా, నేడు ఆర్య సమాజ్ ఉద్యమం కూడలిలో ఉంది. ఇక్కడి నుండి అది మరింత అసంబద్ధంలోకి మునిగిపోవచ్చు లేదా పునరుద్ధరణ మరియు పునఃనిర్మణ మార్గాన్ని తీసుకోవచ్చు. వ్యంగ్యంగా, సమాజం యొక్క ఆచరణాత్మక సమస్యలలో ఒకటి దాని భౌతిక సంపద. ఇది గణనీయమైన భూ ఆస్తి మరియు సంస్థాగత ఆస్తులతో నిండి ఉంది. ఇది స్వయంగా సమస్య కానవసరం లేదు. కానీ దీన్ని ఒక వాస్తవంగా శాపంగా మార్చేది ఏమిటంటే, అందుబాటులో ఉన్న వనరులకు అనుగుణంగా ఒక లక్ష్యం లేకపోవడం. ఈ స్థితిలో, సేకరించబడిన భౌతిక వనరులు ఉద్యమం యొక్క లేబుల్‌ను కలిగి ఉన్నవారిలో దురాశను పదును పెడతాయి, కానీ దాని నుండి ఆధ్యాత్మికంగా దూరం చేయబడతాయి. ఇదే సమాజాన్ని స్వీయ-ఓటమి వ్యాజ్యం మరియు రాజకీయ ధ్రువణతలోకి నెట్టింది.

నియమం ప్రకారం, స్పష్టమైన లక్ష్యం లేనప్పుడు సంపద దానికదే ఒక ముగింపుగా మారుతుంది. ఒక లక్ష్యాన్ని సాధించడానికి ఉద్దేశించిన భౌతిక వనరులు దేవుడిగా మారుతాయి. ఇది అపరిమితమైన మరియు దోపిడీ దురాశను సక్రియం చేస్తుంది.

ఒక ఉద్యమం ఏ రకమైన నాయకులను ఆకర్షిస్తుందో లేదా ఉత్పత్తి చేస్తుందో ఆ ఉద్యమం యొక్క వాస్తవ దుస్థితికి ఒక ముఖ్యమైన సూచిక. అది ఆరోగ్యంగా మరియు చైతన్యవంతంగా ఉన్నప్పుడు, దాని నాయకులు ఆదర్శవాదులు మరియు దార్శనికులుగా ఉంటారు. కానీ అది అనారోగ్యంతో ఉన్నప్పుడు, అది కిరాయి మరియు క్రూరమైన అవకాశవాదులను ఆకర్షిస్తుంది, వారి స్వార్థ ప్రయోజనాలను సాధించడంలో పూర్తిగా నిష్కపటంగా ఉంటుంది.

దీని నుండి సమాజ్ ఎదుర్కొంటున్న రెండవ ప్రధాన సమస్య తలెత్తుతుంది: రాజీ స్ఫూర్తి, ఇది దాని లక్ష్య భావాన్ని చంపుతుంది. దురాశ బలవంతంగా రాజీ స్ఫూర్తిని పెంచుతుంది. దీనికి ఎటువంటి ఆదర్శవాద లేదా వేదాంత స్థిరత్వం అవసరం లేదు. దురాశలో, వ్యక్తిగత లాభం ఏకైక ప్రేరణాత్మక అంశం మరియు ఈ ప్రయోజనానికి ఉపయోగపడేది ఏది అయినా స్వాగతించదగినది. ఇది ఆర్య సమాజ్‌లోని ఒక వర్గం సంఘ్ పరివార్‌కు సామీప్యతను వివరిస్తుంది, ఇది బిజెపి నేతృత్వంలోని ఎన్.డి.ఎ. పాలనలో స్పష్టంగా కనిపించింది. ఈ రకమైన రాజీ ఉద్యమ స్ఫూర్తికి విషం. దానిని అరికట్టి నిర్మూలించకపోతే, అది ఆ ఉద్యమం యొక్క ఖచ్చితమైన మరణానికి దారితీస్తుంది. రాజీ అనే సంకెళ్లను తొలగించి, నిబద్ధత అనే రెక్కలను స్వీకరించాల్సిన అత్యవసర అవసరం ఇప్పుడు సమాజానికి ఉంది. మహర్షి వ్యక్తిత్వం మరియు ఆకర్షణ యొక్క మాయాజాలం నిబద్ధత. తరచుగా, ఆర్య సమాజం యొక్క ప్రజా కార్యక్రమాలకు హాజరవుతున్నప్పుడు అది ప్రత్యేకంగా ఎక్కడికీ వెళ్ళడం లేదని నాకు అనిపిస్తుంది. విధులు నాయకుల ప్రాముఖ్యతను ప్రదర్శిస్తాయి మరియు పెద్దలకు దండలు వేసే అంతులేని ఆచారం అజెండాను దాదాపుగా దృష్టిలో ఉంచుకోదు.

సమాజం ఎదుర్కొంటున్న మూడవ సమస్య దాని స్ఫూర్తిని మరియు అసలు దృష్టిని కోల్పోవడం. భారతదేశంలో ఒక గొప్ప సమాజాన్ని అభివృద్ధి చేయడానికి ఆర్య సమాజం ఒక సమగ్ర సామాజిక-ఆధ్యాత్మిక దృష్టి. ఆ కోణంలో, ఇది ఒక మతం కాదు, ప్రపంచ ఔచిత్యాన్ని కలిగి ఉన్న ఉద్యమం. మరియు ప్రపంచ స్థాయిలో దాని సరైన పాత్రను పోషించడానికి వేదిక ఇప్పుడు సిద్ధంగా ఉంది. కానీ అలా చేయడానికి, సమాజం హృదయపూర్వక స్వీయ-మూల్యాంకనం మరియు ఆధ్యాత్మిక పునరుద్ధరణ ప్రక్రియ ద్వారా వెళ్ళాలి. అది దయానందుడి స్ఫూర్తిని సంగ్రహించాలి. దయానందుడిని అనిడోల్‌గా మార్చకూడదు. ఆయన లక్ష్యం కాదు. ఆయన అరణ్యంలో ఏడుస్తున్న స్వరం, ప్రజలను పునరుద్ధరణ మరియు పునరుజ్జీవనం కోసం పిలిచాడు. ఆయన తన కాలపు పరిమితులకు అతీతుడు కాదు. కానీ ఆయన సాధ్యమైనంతవరకు వాటి కంటే పైకి ఎదగడానికి ప్రయత్నించారని చెప్పాలి. ఆయన అనుచరులకు ఇచ్చిన సవాలు ఏమిటంటే, ఇచ్చిన సందర్భాన్ని ఆధ్యాత్మిక హేతుబద్ధత దృక్కోణం నుండి నిమగ్నం చేయడం. దేవుని ప్రేమ, కరుణ, సత్యం మరియు న్యాయం మన సామూహిక ఉనికి యొక్క నరాలు మరియు కణజాలాలలో ప్రబలంగా ఉండేలా చేయడం మరియు అన్ని రకాల అణచివేత మరియు దోపిడీని, ముఖ్యంగా మతం యొక్క అలీబి కింద ఆచరించే వాటిని అంతం చేయడం.

మహర్షి దయానంద్ మతాన్ని విముక్తి మరియు సామాజిక అభ్యున్నతికి సాధనంగా మార్చడానికి సార్వత్రిక ఆహ్వానం. అణచివేత శక్తులపై మరియు అణచివేతను చట్టబద్ధం చేసే అస్పష్టవాద ఏజెంట్లపై ఆయన క్రూరమైన యుద్ధాన్ని ఆదేశించాడు. ఆర్య సమాజం అనేది మానవ జాతి యొక్క గొప్పతనాన్ని జరుపుకోవడానికి ఆదేశించబడిన ఒక ఉద్యమం, ఇది అన్ని వాస్తవికతకు మూలం మరియు నిజమైన మానవత్వం యొక్క మార్గదర్శక కాంతిపై ఆధారపడి ఉంటుంది. మన జాతీయ దృశ్యానికి దాని ఔచిత్యము ఒక స్పష్టమైన వాస్తవికత. దాని నేటి సంరక్షకులు దీనిని ఎంతవరకు గ్రహించి, దీనిని పరిష్కరించడానికి ధైర్యం కలిగి ఉన్నారో, కాలమే సమాధానం చెప్పాలి.

మహర్షి దయానంద్ మరియు వేదాలు

- ప్రొఫెసర్ విఠల్ రావు ఆర్య

ఆర్య సమాజం స్థాపించి 150 సంవత్సరాలు పూర్తయిన సందర్భంగా ఆర్య సభ మారిషస్ మూడు రోజుల అంతర్జాతీయ ఆర్య మహా సమ్మేళనాన్ని నిర్వహించడం ప్రపంచ ఆర్య సమాజ సమాజానికి ఎంతో ఆనందాన్ని కలిగించే విషయం. మారిషస్ గణతంత్ర అధ్యక్షుడు శ్రీ ధరమ్‌వీర్ గోకుల్ జి.సి.ఎస్.కె. ఈ సందర్భంగా సమావేశాన్ని ప్రారంభించడానికి హాజరు కావడం గర్వకారణం మరియు సంతోషకరమైన విషయం. ఆయన ప్రారంభోత్సవం మారిషస్ ప్రజలకు మాత్రమే కాకుండా ప్రపంచ సమాజానికి కూడా ఒక ముఖ్యమైన సందేశాన్ని ఇస్తుంది, ఇది నేటికీ ప్రపంచానికి వేదాలు మరియు దయానంద్ యొక్క ప్రాముఖ్యతను చూపిస్తుంది మరియు దాని అవసరాన్ని కూడా మనకు తెలియజేస్తుంది. అందువల్ల, ఆర్య సమాజం యొక్క శిరోమణి సభ ప్రధాన కార్యదర్శిగా, సార్వదేశిక ఆర్య ప్రతినిధి సభ న్యూఢిల్లీలో, మారిషస్ ఆర్య సభ, దాని అధికారులు మరియు మారిషస్ ప్రజలు మరియు అధికారులను నేను హృదయపూర్వకంగా అభినందిస్తున్నాను. ఈ సదస్సు సందర్భంలో, వివిధ అంశాలపై చర్చలు మరియు సెమినార్లు నిర్వహించడం కూడా ప్రశంసనీయం మరియు ఉపయోగకరంగా ఉంటుంది.

మహర్షి దయానందుడు మరియు వేదాలు అనే అంశం కింద, వేదాలలో శౌర్యం, ధైర్యం మరియు ధైర్యం (వేదాలలో వీరత్వం, శౌర్యం మరియు ధైర్యం యొక్క ఆత్మ) యొక్క భావాలను ప్రస్తుతించమని నన్ను అడిగారు. వాస్తవానికి, వేదాలలో చాలా చోట్ల శౌర్యం మరియు ధైర్యం యొక్క భావాలు వ్యక్తీకరించబడ్డాయి. ముఖ్యంగా, ఇక్కడ కొన్ని మంత్రాలు మాత్రమే ప్రస్తుతించబడ్డాయి. భగవంతుడు వేదం ఇలా చెబుతోంది.

కృతం మే దక్షిణే తౌందర, జయో మే సవ్య ఆహిత. - అథర్వ. 7.52.8

"నా కుడి చేతిలో చర్య, ఎడ చేతిలో విజయం ఉన్నాయి."

మీరు వేద శౌర్య ఢంకా వినాలనుకుంటే మరియు ధైర్యవంతులైన పురుషుల తరంగాలను లేవనెత్తే వేద పాటలను వినాలనుకుంటే, చూడండి, వేదం యొక్క సందేశం ధైర్యంగా, కష్టపడి పనిచేసేవారిగా మరియు చురుగ్గా ఉండటం. శక్తివంతంగా, నిర్భయంగా మరియు ఆశావాదంగా ఉండండి, దీర్ఘాయుష్మతో మరియు మానవత్వంతో ఉండండి, దౌర్జన్యాన్ని కాకపోయినా రాక్షసులను అణిచివేయండి.

ఈ ప్రపంచంలో మీరు నిష్క్రియంగా మరియు విధివాదంగా కూర్చుని ఉండాలని వేదం బోధించదు. చర్య లేకుండా భక్తివాదం మరియు విధివాదం యొక్క ప్రచారం కారణంగా భారతదేశం చాలా నష్టపోయింది. కాబట్టి, వేద కర్మయోగం మరియు వేద శౌర్యాన్ని ప్రచారం చేయడం అవసరం. అదేవిధంగా

కుర్వన్నేవే కర్మాణి జిజివిషేచ్ఛత్ సమాహా - -యజు. 40.2

"ఒక మనిషి ఈ విధిని నిర్వర్తిస్తూ ఇన్ని సంవత్సరాలు జీవించాలని కోరుకోవాలి." ఇది వేద జీవిత నినాదం.

భద్రం నో అపి వతయ్ మనో దక్షమృత్ క్రతుమ్. - ఋగ్. 10.25.1

"ఓ ప్రభూ! "నీవు నాలో ఉత్సాహం, బలం మరియు చర్యను పీల్చు." వేదాల ఈ కర్మయోగ ప్రార్థనలను మనం ఎల్లప్పుడూ గుర్తుంచుకోవాలి. అదే సమయంలో, అన్యాయాన్ని మరియు అణచివేతను నాశనం చేయడానికి హింస చేయవలసి వచ్చినప్పటికీ, అది హింస కాదు, ధైర్యం అని వేదాల ఈ సందేశం కూడా మన ముందుకు రావాలి. ఒక దుష్ట నిరంకుశుడు మనల్ని అణచివేయడానికి వస్తే, అతనితో ధైర్యంగా పోరాడటం మన కర్తవ్యం మరియు పిరికివాడిగా మారడం కాదు. అందుకే వేదం మనిషిని మేల్కొలిపి చెబుతుంది.

ప్రేత జయత నర్ ఇంద్రో వాహ్ శర్మ్ యచ్ఛతు.

ఉగ్రా వః సంతు బాహవోనఘృష్య యత్సాత్ - ఋగు. చె 10.103.13

వీరా! లేచి, ముందుకు సాగి, జయించు. ఇంద్రుడు నీకు ఆనందాన్ని ప్రసాదించుగాక. నీ చేతుల్లో బలం ఉండుగాక, నిన్ను ఎప్పటికీ ఓడించలేను.

వీ రక్షో వి మృఘో జహి వి వృత్రస్య హను రుజ్. వి మన్యుమీంద్ర వృత్రహన్నమిత్రస్యాభి దశథ. - ఋగ్వేదం 1.152.3

ఓ ధైర్యవంతుడా! రాక్షసులను నాశనం చేయు, హింసాత్మకులను నరికివేయు, దుష్ట శత్రువు దంతాలను విరిచివేయు. నిన్ను బానిసగా చేయాలనుకునే ఆ శత్రువును నరికివేయు.

ఉత్తిష్ఠత్ సామ్నాహ్యధ్వముదారః కేతుభిః సః సర్ప ఇతర్జన రక్షాంశమిత్రాను ధావత్ - అథర్వ, 11.10.1

వీరులారా లేచి, మీ నడుములను బిగించుకోండి, మీ చేతుల్లో జెండాలను పట్టుకోండి. నాగుపాములను, దుర్మార్గులను, అపరిచితులను, రాక్షసులను, శత్రువులను దాడి చేయండి. వేదాల ఈ స్ఫూర్తిదాయకమైన మాటలను విన్నప్పుడు, వేద యోధుడు గర్జిస్తూ ఇలా అంటాడు-

మన వేద సాహిత్యంలో ప్రతి అడుగులోనూ ధైర్య స్ఫూర్తి నిండి ఉంటుంది. శ్రీకృష్ణుడు గీతను 'యుద్ధగీతం' (యుద్ధ గీతం)గా రచించాడు, దీనిలో ధైర్యసాహసాలను మరియు యుద్ధ స్ఫూర్తిని ప్రేరేపించడానికి అధ్యాయాల తర్వాత అధ్యాయాలు వ్రాయబడ్డాయి. అదేవిధంగా, రామాయణం, మహాభారతం, స్మృతి మరియు నీతి గ్రంథాలు ధైర్యసాహసాలతో నిండి ఉన్నాయి. అయినప్పటికీ, కొంతమంది ఈ విషయంలో వేదాలు ఏమి చెబుతాయని అడుగుతారు ? ప్రొఫెసర్ రామనాథ్ జీ వేదలంకర్ తన 'వేద వీర్ గర్జన' పుస్తకంలో మన నాలుగు వేదాల నుండి కొన్ని అందమైన శౌర్య మంత్రాలను సేకరించారు. శౌర్యానికి మరియు శత్రువుపై విజయం కోసం వేదాలలో ఎన్ని అందమైన మరియు శక్తివంతమైన బోధనలు ఉన్నాయో పాఠకులు తెలుసుకునేలా మేము ఆ మంత్రాలలో కొన్నింటిని ఇక్కడ అందిస్తున్నాము-

**యథా సూర్యో నక్షత్రానముద్యాంస్తేజంస్యదదే.
యేవ్ ఆ స్త్రీణాం చ పుంసాం చ ద్విషతమా?
అ వర్చ ఆ దాదే.** -అథర్వ. 7.13.1

మీరు నన్ను సాధారణ వ్యక్తిగా భావించారా? నేను సూర్యుడిని, సూర్యుడిని ! సూర్యుడు ఉదయించి అన్ని నక్షత్రాల వైభవాన్ని తీసివేస్తాడు, అదే విధంగా, నేను నా ప్రత్యేకమైన ప్రకాశంతో ప్రపంచంలో ఉదయించి శత్రువుల వైభవాన్ని తీసివేస్తాను.

**అహం స యో నవస్త్వ్వ బృహద్రథం స
వృత్రేవ దాసం వృత్రహారుజం.
యద్వర్ధయన్తం ప్రత్యన్తమానుషగ్దరే పరే
రజసో రోచనకరమ్ ?** -10.49.6

వినండి, పేదల రక్తాన్ని పీల్చి కొత్త భవనాలు నిర్మించే దొంగలను, పెద్ద రథాలు మరియు రథాలలో తిరిగే వారిని దుమ్ము దులిపిన వ్యక్తిని నేనే. అణచివేత ఆధారంగా వర్ధిల్లుతున్న దుర్మార్గుల కాళ్ళను నేను పట్టుకుని, వారిని స్వర్గం దాటి పడిపోయేలా ఎత్తుకు విసిరేశాను.

**అహమింద్రో న పరా జిజ్ఞా ఇద్ధానం, న
ముత్యవే'వ తస్తే కదా చన్.** -10.48.5

నా పరిచయం వినండి, నేను ఇంద్రుడిని, సంపదను ఎప్పటికీ ఓడించలేని ధైర్యవంతుడిని. నేను సులభంగా చనిపోను.

**కృతం మే దక్షిణే హస్తే జయయో మే సవ్య
ఆహింత్ః** ఏ 7.50.8

నా కుడి చేతిలో కర్మ, ఎడమ చేతిలో విజయం ఉన్నాయి. ఏ హంతహం పృథ్వీమి మాన్ ని దధానిః వేహ్ వా.కువిత్సోమస్య పామితి ఏఏ

ఆర్య సమాజ స్థాపకుడు మహర్షి దయానంద సరస్వతి వేదాలను పునరుద్ధరించిన తర్వాత, ధైర్యం మరియు ధైర్యానికి సంబంధించిన అనేక ఉదాహరణలు ఇవ్వవచ్చు. వేదాలు మరియు గ్రంథాలు మంత్రాలతో నిండి ఉన్నాయి. వేద పండితులు కూడా వాటిని సేకరించారు. ఇవన్నీ ఉన్నప్పటికీ, వేదాలు మరియు ఇతర గ్రంథాలలో అహింసకు గొప్ప ప్రాముఖ్యత ఉంది. హింస కేవలం ధైర్యానికి సంకేతం కాదు. ధైర్యం మరియు ధైర్యానికి అంతిమ సంకేతం అహింస.

మహాత్మా గాంధీ అహింసను తన లక్ష్యంగా చేసుకున్నారు మరియు దానిని మత రంగానికి మించి రాజకీయ రంగానికి కూడా తీసుకెళ్లారు. మరియు జాతీయ అసెంబ్లీ తన లక్ష్యాన్ని సాధించే మార్గాలలో అహింసకు ప్రముఖ స్థానం ఇచ్చినప్పటి నుండి, అహింస, దాని నిర్వచనం మరియు పరిమితులు, దాని ఉపయోగం మరియు ప్రాంతం అనే ప్రశ్న చాలా వివాదాస్పదంగా మారింది. అహింస యొక్క స్వభావం మరియు ప్రయోజనం గురించి ప్రజల హృదయాల్లో సందేహాలు తలెత్తాయి! వారు అహింస యొక్క నిజమైన రూపం ఏమిటో తెలుసుకోవాలనుకుంటున్నారు. జీవితంలో ఏ రంగంలో, ఎప్పుడు, ఎక్కడ మరియు ఎంత అహింసను ఆచరించాలి మరియు హింసను ఎక్కడ ఆశ్రయించాలి.

మన మత గ్రంథాలలో అహింసకు చాలా ఉన్నత స్థానం ఉందనడంలో ఎటువంటి సందేహం లేదు, దాని గొప్ప కీర్తిని కీర్తించారు. కొంతమంది మత నాయకులు 'అహింసా పరమో ధర్మః' అంటే ప్రపంచంలోనే గొప్ప మతం అహింస అని కూడా అన్నారు. ప్రపంచంలో మనిషి యొక్క విధులు మరియు మతాలలో, అహింస నిస్సందేహంగా మనిషి యొక్క ఉత్తమ మతం ఎందుకంటే 'మనిషి ఒక సామాజిక జీవి'. మనిషి సమాజంలో జీవించాలి, కాబట్టి ఇతర మానవులతో తన పరస్పర చర్యలలో, ఇతరులు తనతో ఎలా ప్రవర్తించాలని కోరుకుంటున్నారో అదే విధంగా ఇతరులతో ప్రవర్తించడం అతనికి అవసరం అవుతుంది. "ఇతరులకు మీరు ఎలా ప్రవర్తించాలో అలాగే చేయండి" అనే సామెత ప్రసిద్ధి చెందింది. ఎందుకంటే ప్రతి మానవుడు ఇతరులు తనతో మంచిగా ప్రవర్తించాలని, తనతో ప్రేమ మరియు సానుభూతి చూపాలని, తన మనస్సు మరియు శరీరాన్ని బాధించకూడదని, అంటే తన పట్ల దయ మరియు అహింస భావాలను కలిగి ఉండాలని కోరుకుంటాడు, కాబట్టి ఇతర మానవుల పట్ల దయ మరియు అహింస భావాలను కలిగి ఉండటం, ఎవరి మనస్సును బాధించకూడదు, ఎవరినీ ఇబ్బంది పెట్టకూడదు మరియు ఎవరినీ అణచివేయకూడదు అనేది అతని విధి అవుతుంది. ఈ విధంగా, మానవుని స్వంత ప్రయోజనం దృష్ట్యా అహింసను అంతిమ మతం అని పిలుస్తారు.

మన గ్రంథ రచయితలు, ఋషులు, యోగాలోని ఎనిమిది భాగాలలో అహింసను చేర్చారు. యోగ దర్శనంలో, పతంజలి ఋషి యోగాలోని ఎనిమిది భాగాలను వర్ణించారు, యమ, నియమ, ఆసన, ప్రాణాయామం, ప్రత్యాహార, ధారణ, ధ్యాన, సమాధి, యమకు మొదటి స్థానం ఇవ్వబడింది మరియు యమను ఐదు రకాలుగా వర్ణించారు:-

యోగ సాధనాలలో యమ మొదటిది కాబట్టి, యోగ సాధనలలో అహింసకు మొదటి స్థానం ఉంది. ఎందుకంటే యోగ సాధన దేవునితో ఐక్యతకు మరియు మోక్షానికి మార్గం. యోగ సాధన మరియు మోక్ష సాధనతో పాటు, అహింస ఫలం ప్రాపంచిక దృక్కోణం నుండి కూడా చాలా ప్రయోజనకరంగా ఉంటుందని ఋషి పతంజలి చెప్పారు. ఆయన వ్రాస్తున్నారు :-

అహింసా ప్రతిష్ఠాయాం తత్సన్నిధౌ వైరత్యాగః.

అంటే, అహింసను స్థాపించినట్లయితే లేదా అనుసరిస్తే, మనిషికి ఏ జీవి పట్లా శత్రుత్వం ఉండదు. మనిషి గురించి మనం ఏమి చెప్పగలం, అన్ని ఇతర జీవులు, జంతువులు మరియు పక్షులు కూడా అతని స్నేహితులు అవుతాయి మరియు మొత్తం ప్రపంచంలో మనిషికి శత్రువు లేనప్పుడు, అతనికి అంతకంటే ఎక్కువ ఆనందం ఏముంటుంది ? ఇది అహింస యొక్క మహిమ. గీతలో కూడా ఇది వ్రాయబడింది:-

అహింసా సత్యంక్రోధస్త్యాగః శాంతిరైపైషుణం.

ఇక్కడ కూడా అహింసకు మొదటి స్థానం ఇవ్వబడింది. మనుస్మృతిలో కూడా, ఒక చోట, మతం యొక్క సంక్షిప్త లక్షణాలను వివరిస్తూ, అహింసకు మొదటి స్థానం ఇవ్వబడింది-

**అహింసా సత్యమస్తేయం శౌచమింద్రియ
నిగ్రహః. ఏతాన్సమాసికం ధర్మ చతుర్వర్ణ్య
బ్రబిన్మనుః ఏఏ** (మను. 10.63)

మరొక చోట మను మహారాజ్ తన మనుస్మృతిలో మతం యొక్క పది లక్షణాలను ఇచ్చాడు. వాటిలో అహింస అనే పదం కనిపించదు, కానీ ఆయన చెప్పిన రెండవ లక్షణం క్షమ మరియు పదవ లక్షణం కోపం లేకపోవడం, వీటిలో కూడా అహింస అనే

మహర్షి దయానంద్ మరియు వేదాలు

భావన ఉంటుంది. మనిషి హృదయంలో అహింస అనే భావన తలెత్తినప్పుడు, అతను ఎవరిపైనా కోపం తెచ్చుకోడు లేదా ఎవరినీ బాధించడు. ఇతరులను క్షమించే మరియు ఇతరులు తన పట్ల చూపే అగౌరవాన్ని భరించే అతని శక్తి కూడా పెరుగుతుంది. ఈ విధంగా, అహింస అంతిమ మతం కాకపోయినా, అది ఖచ్చితంగా మన మతంలో భాగం. వేద మతం మరియు వేద సాహిత్యంలో అహింసకు సరైన స్థానం ఇవ్వబడింది. మహాభారతం కూడా ఇలా చెబుతోంది :-

వేద శాస్త్ర పురాణం ఏష సారా సముధృతః
ఏ పరోప్కరః పుణ్యాయ పాపాయ పరిదానమ్॥

అంటే, వేదాలు, గ్రంథాలు మరియు పురాణాల సారాంశం ప్రపంచంలో దాన ధర్మాలు చేయడం పుణ్యం మరియు ఇతరులను బాధపెట్టడం పాపం అని సంగ్రహించబడింది. మనం దీనిని ఇలా ఇతర మాటలలో చెప్పవచ్చు-ధర్మం అంటే ఏమిటి, ప్రపంచంలో పాపం ఏమిటి ? దానధర్మాలు చేయడం పుణ్యం మరియు ఇతరులను బాధపెట్టడం పాపం. అంటే, ఇతరులకు ఏదైనా ఇవ్వడం పుణ్యం మరియు వారిని హింసించడం పాపం. సంక్షిప్తంగా, పాపం మరియు పుణ్యం యొక్క వివరణ దీని కంటే మెరుగైనది కాదని నేను భావిస్తున్నాను. ఈ విధంగా, మహాభారతం హింసను పాపంగా మరియు అహింసను ధర్మంగా పరిగణించింది.

బుద్ధుడు మరియు జైనులు ఈ అహింస అంశాన్ని మరింత ముందుకు తీసుకెళ్లి, తమ అభిప్రాయాలలో దానికి ప్రముఖ స్థానాన్ని ఇచ్చి, అహింసను అంతిమ మతంగా పిలిచారు. పాములు, తేళ్లు, పులులు వంటి క్రూరమైన జంతువులతో శత్రుత్వాన్ని విడిచి పెట్టి మనస్సు, వాక్కు మరియు చర్యలో అహింసను అనుసరించే వ్యక్తి మాత్రమే మోక్షానికి అంతిమ స్థితికి చేరుకోగలడు. అందుకే క్షమాపణ ధైర్యవంతులకు ఆభరణం అని అంటారు. బలహీనుడు, అసమర్థుడు లేదా పిరికివాడు క్షమించే శక్తి కలిగి ఉండడు. శక్తివంతుడు మాత్రమే ధైర్యవంతుడు, అతను క్షమించగలడు. కోపం ఒక బలహీనత. ఇది మానవ జీవితంలో సహజం, కానీ అందుకే దానిని జయించాలి మరియు ఇది మానవ జీవిత లక్ష్యం. బలహీనతను జయించడం మరియు మానసిక మరియు ఆధ్యాత్మిక శక్తులను అభివృద్ధి చేయడం. లేకపోతే, మానవ జీవితం మరియు మెదడు లేని జంతువు జీవితం రెండూ ఒకేలా మారతాయి. మానవ జీవితం యొక్క ప్రత్యేకత దాని నుండి అదృశ్యమవుతుంది. బలహీనమైన వ్యక్తి కోపం తప్ప మరేమీ చేయలేనందున అతను ఎక్కువగా కోపంగా ఉంటాడు. శక్తివంతమైన వ్యక్తి ఏదైనా చేయగలడు, కాబట్టి అతనికి పనికిరాని కోపం అవసరం లేదు. అతను పూర్తి ప్రతీకారం తీర్చుకుంటాడు, లేదా అతను మరింత ఆలోచనాత్మకంగా ఉంటే, అతను క్షమించేవాడు. కాబట్టి, కోపం పిరికి వాళ్ళ పని అని చెప్పవచ్చు, ధైర్యవంతుల విధి క్షమించడమే. ద్వేషం ద్వేషాన్ని మాత్రమే సృష్టిస్తుందనేది నిరూపితమైన సత్యం. అదేవిధంగా, కోపం కోపాన్ని మాత్రమే పెంచుతుంది. దాని నుండి ప్రేమ మరియు శాంతిని పొందలేము. పరస్పర కలహాలు, అసూయ మరియు యుద్ధ స్ఫూర్తి కారణంగా నేటి యుగం విధ్వంసం అంచుకు చేరుకుంది. యుద్ధ అగ్నిని వెలిగించడం ద్వారా శాంతి యొక్క చల్లదనాన్ని పొందాలని మనిషి కలలు కంటున్నాడు. ఇది ఎంత వ్యంగ్యం. ఇది ఆలోచన మరియు తెలివితేటల పూర్తి విధ్వంసానికి సంకేతం. అగ్ని ఫలితం అగ్ని మరియు దహనం మాత్రమే కావచ్చు. చెడు చేసిన తర్వాత ప్రతిఫలంగా మంచిని ఆశించడాన్ని పిచ్చి లేదా మూర్ఖత్వం అని మాత్రమే పిలుస్తారు.

భర్తృహరి ఇలా అన్నారు :-

అక్రోధేన జయేత్ క్రోధం అసధు సాధున జయేత్. జాయేత్ కదర్త్ దానేన్, సత్యే నాలిక వ దినం.

శత్రుత్వ భావనను అధిగమించడానికి, క్షమాపణ యొక్క నీరు అవసరం. బూడిద విసిరేవాడి ముఖం మీద బూడిద ఎగిరినట్లే, దుర్వినియోగం దుర్వినియోగం చేసేవాడిని బాధపెడుతుంది. కోపాన్ని అంతం చేయకుండా, సంక్షేమ మార్గాన్ని అవలంబించలేము.

క్రోధస్య కాలకుత్స్య విద్యతే మహాదం తరమ్. స్వాశ్రయం దహతి క్రోధః కల్మతో న చక్షయం.

కోపం మరియు నల్ల విషం మధ్య చాలా తేడా ఉంది. కనీసం కాలకూట విషం దానిని ధరించిన వ్యక్తిని నాశనం చేయదు. కానీ కోపం చాలా శక్తివంతమైన విషం, అది దానిని కలిగి ఉన్న వ్యక్తిని నాశనం చేస్తుంది. మనం తీవ్రంగా ఆలోచించి మన జీవితాల్లో ఉన్న ఈ విషాన్ని పారవేయాలి.

భౌతికవాద రంగంలో ప్రపంచం వేగంగా అభివృద్ధి చెందుతోంది. సైన్స్ చాలా అభివృద్ధి చెందింది. కానీ ఆ పురోగతి అంతా బాహ్యమే. ఒకరి లక్షణాల అభివృద్ధి ద్వారా మాత్రమే అంతర్గత పురోగతి సాధ్యమవుతుంది మరియు అదే నిజమైన పురోగతి. ఈ నిజమైన పురోగతికి క్షమాపణ అభివృద్ధి చాలా అవసరం. మతం యొక్క నిజమైన స్వభావాన్ని తెలుసుకోవడానికి, క్షమించే గుణాన్ని కలిగి ఉండటం మరియు ఈ గుణాన్ని పొందాలంటే, కోపాన్ని వదిలివేయాలి. కోప ధోరణికి దూరంగా ఉండే వ్యక్తి అత్యంత చేదు సంఘటనల నేపథ్యంలో కూడా కోపం తెచ్చుకోడు. అయినప్పటికీ, జాతీయ మరియు సామాజిక అభివృద్ధి సందర్భంలో మరియు దేశాన్ని మరియు సమాజాన్ని రక్షించడానికి శౌర్యం మరియు ధైర్యం యొక్క స్ఫూర్తి చాలా అవసరం. ప్రేమ మరియు మాధుర్యంతో నిండిన ప్రవర్తన మానవుని లక్షణం. మన ముందున్న ఉత్తమ ఉదాహరణ ఆర్యవర్త్ యొక్క జాతీయ మరియు సాంస్కృతిక వీరులు శ్రీ రామచంద్ర మహారాజ్ మరియు కృష్ణ భగవాన్.-

- ఁప్రొఫెసర్ విఠల్ రావు ఆర్య
ప్రధాన కార్యదర్శి,
సార్వదేశిక ఆర్యప్రతినిధి సభ
న్యూఢిల్లీ-110002
మొబైల్:- 9849560691
ఇ-మెయిల్:aryavithalrao@gmail.com

Date of Publication 2nd and 17th of every Month, Date of Posting 3rd and 18th of every Month
आर्य जीवन 18-04-2025 REGISTERED-REGD. No. D/RNP/HCD-783/2024-26 RN No. 52[illegible]/93

ఆర్య జీవన్

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక
Editor : Sri Vithal Rao Arya, M.Sc., L.L.B., Sahityaratna.
Arya Pratinidhi Sabha A.P.-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-500095.
Phone : 040-24753827, 24756983, Narendra Bhavan : 040-24760030.
Annual Subscription Rs. 250/- సంపాదకులు : విఠల్ రావు ఆర్య, ప్రధాన సభ

To,
श्री प्रधान, मन्त्री जी
।दल्ली आर्य प्रतिनि।
१५, हनुमान रोड, नई ।

97 वर्ष की आयु में आर्य नेता श्री मिठाईलाल सिंह जी का निधन

आर्य प्रतिनिधि आ.प्र.- तेलंगाना की ओर से तथा
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से
विनम्र श्रद्धाँजलि - प्रो. विट्ठल राव आर्य, मन्त्री, सार्वदेशिक सभा
आर्य नेता स्वामी आर्यवेश जी ने भी स्व. श्री मिठाईलाल सिंह जी को श्रद्धाँजलि अर्पित की

पं. नरेन्द्र जी के जन्म दिवस पर श्रीराम नवमी के दिन उन्हें याद किया गया

माल्यार्पण करते हुए सभा के उपमन्त्री श्री दिनेश सिंहजी तथा श्री बसीरेड्डी जी

आर्य समाज के वरिष्ठ एवं समर्पित आर्य नेता, समाजसेवी श्री मिठाई लाल सिंह जी का विगत दिनांक 6 अप्रैल, 2025 को 97 वर्ष की आयु में आकस्मिक निधन हो गया। उनका अंतिम संस्कार 8 अप्रैल, 2025 को मुंबई स्थित 'सायन' श्मशान भूमि में पूर्ण वैदिक विधि–विधान के साथ सम्पन्न हुआ।

श्री मिठाई लाल सिंह जी की पुण्य स्मृति में श्रद्धांजलि सभा एवं शांति यज्ञ का आयोजन 9 अप्रैल, 2025 को सायं 4 से 6 बजे तक योगी सभागृह हाल, स्वामीनारायण मंदिर, दादर (मुंबई) में किया गया। इस अवसर पर सैकड़ों आर्यजन एवं प्रबुद्ध महानुभावों ने उपस्थित होकर उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के नेता, स्वामी आर्यवेश जी, दक्षिण अफ्रीका में आर्य समाज के पूर्व निर्धारित कार्यक्रमों में व्यस्त रहने के कारण इस सभा में सशरीर उपस्थित नहीं हो सके। उन्होंने खेद प्रकट करते हुए अपनी शोक–संवेदना एक लिखित संदेश के माध्यम से प्रेषित की। स्वामी जी ने अपने संदेश में बताया कि श्री मिठाई लाल सिंह जी मूलतः उत्तर प्रदेश के निवासी थे, परंतु उन्होंने अपने जीवन के आरम्भिक काल से मुंबई आकर अपना व्यवसाय स्थापित किया और तत्पश्चात आर्य समाज के संगठन से जुड़कर समाजसेवा में सक्रिय भूमिका निभाने का संकल्प लिया। वे लम्बे समय तक आर्य प्रतिनिधि सभा, मुंबई के प्रधान रहे। श्री सिंह जी एवं उनकी धर्मपत्नी, स्वर्गीय माता

सावित्री सिंह जी ने आर्य समाज के कार्यों को गति प्रदान करने में उल्लेखनीय योगदान दिया। यह दंपत्ति जीवनपर्यन्त पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए समाजसेवा एवं परोपकार के कार्यों में संलग्न रहा। श्री मिठाई लाल सिंह जी आर्य समाज के एक प्रतिष्ठित, कर्मठ एवं मिलनसार आर्य नेता थे। वे तन–मन–धन से आर्य समाज एवं राष्ट्र की सेवा में समर्पित रहे।

स्वामी आर्यवेश जी ने कहा कि जब भी उनसे भेंट होती थी, वे अत्यंत आत्मीयता से मिलते थे और आर्य समाज के भविष्य को लेकर गंभीर चर्चा करते थे। उनका इस प्रकार अचानक चले जाना न केवल उनके परिवार के लिए, अपितु आर्य समाज एवं राष्ट्र के लिए भी अपूरणीय क्षति है। इस दुखद घटना से मुझे व्यक्तिगत रूप से भी अत्यंत पीड़ा पहुँची है।

मैं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से श्री मिठाई लाल सिंह जी को श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि उनकी आत्मा को शांति एवं सद्गति प्रदान करें तथा शोकसंतप्त परिवारजनों को इस दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

श्रद्धांजलि सभा एवं शांति यज्ञ के इस कार्यक्रम में उपस्थित महानुभावों द्वारा व्यक्त किए गए उद्गार इस बात के प्रमाण हैं कि श्री मिठाई लाल सिंह ने अपने जीवन में संघर्ष करते हुए कितने महत्त्वपूर्ण कार्य संपन्न किए हैं।

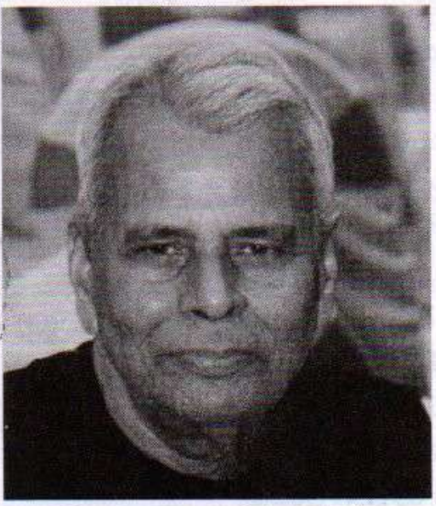

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR.
Editor : Sri Vithal Rao Arya E-mail : acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691.

సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్ రావు ఆర్య, ప్రధాన సభ, ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్ బజార్, హైదరాబాద్-95. Ph : 040-24753827, Email : acharyavithal@gmail.com
सम्पादक : श्री विट्ठल राव आर्य, प्रधान सभा ने सभा की ओर से आकृति प्रिन्टर्स, चिक्कड़पल्ली में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया। Narendra Bhavan
प्रबन्धक प्रकाशक : श्री हरिकिशन वेदालंकार, मन्त्री सभा आर्य प्रतिनिधि सभा, आ.प्र.- तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद-500 095. Ph : 040-24760030.